वर्ष 2018 | अंक 17

अरण्य

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी

देहरादून

राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय, भारत सरकार) की ओर से 09.02.2018 को वाराणसी में आयोजित उत्तरी क्षेत्र के राजभाषा सम्मेलन में राजभाषा में श्रेष्ठ कार्य-निष्पादन के लिए इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून को तृतीय पुरस्कार प्रदान किया गया।

अरण्य

वर्ष 2018 | अंक 17

संरक्षकः

श्री ओमकार सिंह भा.व.से.

निदेशक

परामर्शः

श्री एस. के. अवस्थी भा.व.से.

अपर निदेशक

सम्पादकः

डॉ. प्रवीन झा भा.व.से.

प्राध्यापक

सह सम्पादकः

श्री अमित कुमार रूहेला

हिन्दी अनुवादक

सहयोगः

श्री चमन सिंह

आशुलिपिक

सत्यमेव जयते

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी INDIRA GANDHI NATIONAL FOREST ACADEMY

अरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु

राजभाषा अनुभाग

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. हर्ष वर्धन
Dr. Harsh Vardhan

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTER OF ENVIRONMENT, FOREST &
CLIMATE CHANGE

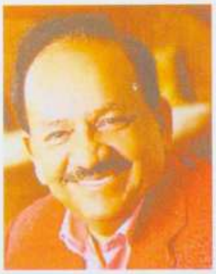

संदेश

मुझे यह जानकर हर्ष की अनुभूति हो रही है कि इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून अपनी वार्षिक हिन्दी पत्रिका 'अरण्य' का 17वां अंक प्रकाशित करने जा रही है।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका के प्रकाशन से अकादमी के अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों और कर्मचारियों को अपनी सृजनात्मक प्रतिभा उजागर करने का सुअवसर प्राप्त होगा। सभी पाठक पत्रिका के नवीनतम अंक के माध्यम से लेखकों एवं रचनाकारों के विचारों से लाभान्वित होंगे। 'अरण्य' न केवल साहित्यिक चिंतन की प्रस्तुति का माध्यम है, अपितु वानिकी, विज्ञान और वन्यजीवन से जुड़ी सूचनाओं व जानकारियों को भी सामने रखती है।

'अरण्य' पत्रिका के सफल प्रकाशन के लिए मैं शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ।

(डॉ. हर्ष वर्धन)

दिनांक : 22 जनवरी, 2019

PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD, NEW DELHI-110 003,
Ph.: (011) 24695136, 24695132, Fax: (011) 24695329

सी.के. मिश्रा
C.K. Mishra

सचिव
भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
SECRETARY
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST & CLIMATE CHANGE

सत्यमेव जयते

संदेश

यह प्रसन्नता का विषय है कि इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून द्वारा वार्षिक हिन्दी पत्रिका 'अरण्य' के 17वें अंक का प्रकाशन किया जा रहा है।

स्वतंत्रता प्राप्ति तथा राष्ट्र के एकीकरण में हिन्दी की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही है। आज हिन्दी न केवल राष्ट्रीय स्तर पर जन-जन की भाषा बनकर उभर रही है, अपितु अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी व्यापारिक दृष्टि से विश्व व्यापार में संचार का माध्यम बनकर देश का गौरव बढ़ा रही है। देश के हिंदी प्रेमियों, विद्वानों तथा मनीषियों ने जिस प्रकार हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया है, उसी प्रकार इसे सजाने, संवारने तथा सरकारी कार्य में अपनाने का दायित्व हमारा भी है। मेरा विश्वास है कि आप न केवल हिंदी भाषा में ही अपना सरकारी कामकाज करेंगे, बल्कि अपने व्यक्तिगत कार्यों एवं साधारण बोलचाल में भी हिंदी को प्राथमिकता देंगे।

अरण्य पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

(सी.के. मिश्रा)

स्थान: नई दिल्ली
दिनांक : 13 दिसम्बर, 2018

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110 003 फोन: (011) 24695262, 24695265, फैक्स: (011) 24695270
INDIRA PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD, NEW DELHI-110 003, Ph.: (011) 24695262, 24695265, Fax: (011) 24695270
E-mail: secy-moef@nic.in, Website: moef.gov.in

सिद्धान्त दास
SIDDHANTA DAS

वन महानिदेशक एवं विशेष सचिव
भारत सरकार
पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय
DIRECTOR GENERAL OF FOREST & SPL. SECY.
GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF ENVIRONMENT, FOREST AND CLIMATE CHANGE

सत्यमेव जयते

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून अपने अधिकारियों/कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति अभिरूचि पैदा करने के लिए हिन्दी पत्रिका 'अरण्य' का 17वां अंक प्रकाशित करने जा रही है।

हिन्दी हमारे देश की राजभाषा है और इसकी एक अपनी सुदृढ़ पहचान रही है। विचारों की सरलतम अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में एवं अपनी वैज्ञानिकता के लिए हिन्दी पूरे विश्व में जानी जाती है। राजभाषा होने के कारण हमारा भी संवैधानिक कर्तव्य है कि हम अपने सरकारी कामकाज में हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करें।

'अरण्य' पत्रिका का उद्देश्य अकादमी में कार्यरत अधिकारियों/कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति अभिरूचि जगाना है। मुझे आशा है कि प्रकाशनाधीन अंक में अकादमी के अधिक से अधिक अधिकारी एवं कर्मचारी लेखों के माध्यम से भी अपना योगदान देकर अपनी लेखन प्रतिभा को उजागर करेंगे।

मैं 'अरण्य' के सफल प्रकाशन हेतु अपनी शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ और आशा करता हूँ कि पत्रिका अपने निहित उद्देश्यों को प्राप्त करने में सफल होगी।

(सिद्धान्त दास)

इंदिरा पर्यावरण भवन, जोर बाग रोड, नई दिल्ली-110 003 फोन: 24695278, फैक्स: (011) 24695412
INDIRA PARYAVARAN BHAWAN, JOR BAGH ROAD, NEW DELHI-110 003, Ph.: 24695278, Fax: (011) 24695412
E-mail: dgfindia@nic.in

ओमकार सिंह, *भा.व.से.*
निदेशक
OMKAR SINGH, *IFS*
Director

सत्यमेव जयते

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी
पो.ऑ. न्यू फॉरेस्ट, देहरादून–248 006
INDIRA GANDHI NATIONAL FOREST ACADEMY
P.O. NEW FOREST, DEHRADUN-248 006
दूरभाष / TEL.: 0135–2754647
फैक्स / FAX: 0135–2757314

संरक्षक की कलम से...

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी के राजभाषा अनुभाग द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिंदी पत्रिका 'अरण्य' का 17वां अंक आपके सम्मुख प्रस्तुत करते हुए मुझे अपार प्रसन्नता हो रही है। पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन का श्रेय आप जैसे प्रबुद्ध लेखकों एवं पाठकों को जाता है जिनके प्रयासों से पत्रिका का नूतन अंक प्रकाशित होने जा रहा है।

सृजन व्यक्ति की स्वाभाविक प्रकृति है। सृजन का एक रूप लेखन भी है। लेखन के माध्यम से लेखक न केवल अपने विचारों को व्यक्त करता है अपितु समसामयिक विषयों पर अपनी सोच को भी प्रकट कर पाता है। पत्रिका का प्रकाशन विभागीय अधिकारियों एवं कर्मचारियों को अपनी रचनात्मक प्रतिभा को उजागर करने का अवसर प्रदान करता है। इस अंक में भी लेखकों एवं रचनाकारों ने अपना अमूल्य योगदान दिया है। मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि पत्रिका में प्रकाशित लेख पाठकों को अवश्य पसन्द आएंगे और यह पत्रिका राजभाषा हिंदी को सशक्त बनाने में भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगी।

मैं 'अरण्य' के प्रकाशन से जुड़े सभी रचनाकारों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों को पत्रिका के नये अंक के प्रकाशन के लिये शुभकामनाएं देता हूँ।

(ओमकार सिंह)

सत्यमेव जयते

संपादकीय...

अकादमी की वार्षिक पत्रिका 'अरण्य' का 17वां अंक आपको सौंपते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। हमारा देश बहुभाषी है जहां अनेक समृद्ध भाषाएं हैं, किन्तु इन विभिन्न भाषाओं के बोलने वालों के मध्य सम्पर्क हेतु किसी सम्पर्क भाषा की भी आवश्यकता होती है। सम्पर्क भाषा में सरलता, समृद्धता एवं उसकी व्यापकता का होना जरूरी है। हमारे देश के परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा में ये सभी गुण विद्यमान हैं। इसीलिए देश के विद्वानों एवं मनीषियों ने हिंदी को राजभाषा के रूप में महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

अकादमी के वार्षिक कार्यकलापों के साथ-साथ हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने एवं संघ की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के प्रति यह अकादमी कृत संकल्प है। यह अत्यंत प्रसन्नता का विषय है कि अकादमी के निदेशक महोदय के कुशल मार्गदर्शन एवं राजभाषा हिंदी के प्रति उनकी निजी रुचि से अकादमी में हिंदी दिनोंदिन प्रगति कर रही है और राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित किये गये लक्ष्यों को तेजी से पूरा करने की तरफ अग्रसर है।

किसी भी देश की प्रगति में उसकी भाषा की भूमिका विशेष महत्व रखती है। विश्व व्यापार में भारत एक अग्रणी देश है, इसलिए हमारे साथ-साथ पूरे विश्व को भी हिंदी की जरूरत है और हिंदी दूसरे देशों में भी तेजी से अपना विस्तार कर रही है जो कि हमारे लिए गर्व का विषय है।

अकादमी में हिंदी के प्रयोग को और बेहतर करने के प्रयास में अकादमी के सभी कम्प्यूटरों में यूनीकोड का उपयोग किया जा रहा है ताकि हिंदी में काम करने वाले अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों और कर्मचारियों को किसी कठिनाई का सामना न करना पड़े। राजभाषा के प्रचार-प्रसार की दृष्टि से 'अरण्य' का नूतनतम अंक आपके समक्ष है। इस पत्रिका में विभागीय अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों और कर्मचारियों के साथ-साथ अन्य विभागों में सेवारत कार्मिकों, रचनाकारों, लेखकों और विचारकों की रचनाओं को भी समुचित स्थान देने का प्रयत्न किया गया है।

'अरण्य' के लिए अपनी रचनाएं देने वाले अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों, कार्मिकों, आमंत्रित साहित्यकारों और विचारकों को मैं धन्यवाद देता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी उनका सहयोग सदैव हमें मिलता रहेगा। मैं अकादमी के निदेशक, अपर निदेशक, सभी संकाय सदस्यों और कार्मिकों एवं सहयोगियों का भी हार्दिक आभार प्रकट करता हूँ जिनके कुशल मार्गदर्शन एवं सहयोग से इस पत्रिका का प्रकाशन संभव हो सका। आशा करता हूँ कि पाठकों को 'अरण्य' का यह अंक रूचिकर लगेगा। पत्रिका के आगामी अंक को और रोचक एवं समृद्ध बनाने के लिए हमें आपके सुझावों की प्रतीक्षा रहेगी।

15/23.01.19

(डॉ. प्रवीन झा)
प्राध्यापक एवं प्रभारी अधिकारी/राजभाषा

श्री ओमकार सिंह, भा.व.से., निदेशक, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी का साक्षात्कार

अरण्यः महोदय, भारतीय वन सेवा से जुड़ने के बाद आपको देश के विभिन्न राज्यों में सेवा का अवसर मिला। इस दौरान आपको अलग-अलग भाषा-भाषी लोगों से मिलने और उन्हें समझने का मौका मिला होगा। देश को जोड़े रखने में हिंदी के महत्व को आप किस प्रकार रेखांकित करेंगे?

मैं स्वयं को काफी भाग्यशाली मानता हूं कि मुझे केंद्र शासित राज्यों के साथ-साथ अन्य अनेक स्थानों पर भारत सरकार के अंतर्गत सेवा देने का अवसर मिला है। इस दौरान मुझे अनेक अलग-अलग भाषा-भाषी व्यक्तियों से जुड़ने का मौका भी मिला। मैंने अनुभव किया है कि पूरे देश में अनेक भाषाएं और बोलियाँ बोली जाती हैं किंतु हर जगह लोग हिंदी बोलते और समझते हैं। यही इस भाषा का सौंदर्य है कि कोई भी इसे बड़ी आसानी से सीख सकता है और इस प्रकार यह देश को जोड़े रखने में महती भूमिका निभाती है। साथ ही, इससे कार्य करने में भी आसानी होती है।

अरण्यः आप सिविल सेवा से जुड़े अधिकारी हैं। क्या हिंदी माध्यम से इसकी तैयारी में कोई कठिनाई आती है? इसके बारे में आप युवा पीढ़ी को क्या संदेश देना चाहेंगे?

इस विषय में लोगों की राय अलग-अलग हो सकती है। पर मेरा मानना है कि सिविल सेवाओं की तैयारी हिंदी माध्यम से भी की जा सकती है। यदि आप किसी एक भाषा में सहज महसूस करते हैं तो निश्चय ही आप उस भाषा में अपने विचार अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त कर पाएंगे। इससे सहजता आती है और इस प्रकार यह आपके लक्ष्य को कुछ हद तक आसान करता है।

अरण्यः आज के परिदृश्य में ग्लोबल वार्मिंग एक वैश्विक मुद्दा है और इसमें कमी लाने के लिए अनेक देशों के पर्यावरणीय संस्थान कार्य भी कर रहे हैं। आपकी नजर में वे कौन से कारक या क्षेत्र हैं जिन पर ध्यान देकर इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति की जा सकती है?

निश्चित रूप से जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग आज केवल भारत ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर चिंता का कारण बने हुए हैं। इस संबंध में हर देश अपनी ओर से कुछ न कुछ प्रयास कर रहा है जिससे ग्लोबल वार्मिंग की दर में कमी लाई जा सके। वर्ष 2015 में हुए पेरिस जलवायु समझौते के अंतर्गत प्रत्येक देश ने इस जिम्मेदारी को समझा है और ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कमी कर वैश्विक औसत तापवृद्धि की दर को 1.5° तक सीमित रखने पर सहमति व्यक्त की है ताकि जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों और खतरों को कम किया जा सके। इस हेतु प्रत्येक देश को एक कार्ययोजना तैयार कर उसके अनुरूप आगे बढ़ना है। विश्व समुदाय को हमने कार्बन उत्सर्जन में कटौती का जो आश्वासन दिया था उसे तय समय से पहले ही पूर्ण करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

मेरा यह भी मानना है कि देश में प्रत्येक व्यक्ति को अपने-अपने स्तर पर ऐसे छोटे-छोटे कदम उठाने चाहिएँ जो पर्यावरण और नदियों के प्रदूषण को कम करने वाले हों। इसी दिशा में आगे बढ़ते हुए अकादमी ने भी अपने परिसर में हर प्रकार की प्लास्टिक के प्रयोग को प्रतिबंधित कर दिया है। यहां तक कि अकादमी में होने वाले विभिन्न आयोजनों से संबंधित बैनर आदि भी फ्लैक्स के स्थान पर अब कपड़े पर बनवाये जा रहे हैं और प्लास्टिक कटलरी, स्टेशनरी आदि का प्रयोग भी बंद कर दिया गया है। ये सब छोटे-छोटे प्रयास हैं लेकिन यदि हर व्यक्ति अपने स्तर पर इन्हें करना शुरू कर दे तो इनके समेकित परिणाम बहुत बड़े और प्रभावी होंगे।

अरण्यः ऐसा क्या था जिसने आपको भारतीय वन सेवा में आने के लिए प्रेरित किया? जिस समय आपका चयन भारतीय वन सेवा के लिए हुआ क्या उस समय आपके मन में किसी अन्य सेवा में जाने का विचार भी आया?

मैं ग्रामीण पृष्ठभूमि से आता हूँ। हमारे गांव के आस-पास के वन्य क्षेत्र और हरियाली का प्रभाव बचपन से ही मेरे मन पर रहा। सबसे पहले प्रकृति के प्रति लगाव ने ही इस सेवा में आने के लिए प्रेरित किया और भारतीय वन सेवा मेरी नजर में बड़ी ही पवित्र सेवा है जिसमें हम प्रकृति, पर्यावरण और समाज के हितों से सीधे-सीधे जुड़ते हैं। एक बार मन में भा.प्र.से. के लिए प्रयास करने का विचार आया था पर यह एक विचारमात्र ही रह गया।

अरण्यः आपने केंद्र तथा राज्य सरकार के कई विभागों/संस्थानों में शीर्ष अधिकारी के रूप में कार्य किया है। क्या आप सरकारी कामकाज में हिंदी भाषा के प्रयोग को संतोषजनक पाते हैं?

जी हाँ, जैसे मैंने पहले बताया कि मुझे विभिन्न पदों पर केंद्र सरकार और केंद्रशासित प्रदेशों में कार्य करने का अनुभव प्राप्त हुआ है। हिंदी भाषा के प्रयोग की दृष्टि से हर विभाग/संस्थान का अनुभव मिश्रित प्रकार का रहा है। अनेक कार्यालयों में दस्तावेज पहले अंग्रेजी में बनाये जाते हैं और फिर उनका अनुवाद कराया जाता है। इस प्रवृत्ति को बदलने की आवश्यकता है। इसके स्थान पर हमें मूल दस्तावेजों को हिंदी में ही तैयार करना चाहिए और फिर यथा-आवश्यकता उसका अंग्रेजी अनुवाद कराया जाना चाहिए। हालांकि खुशी की बात है कि इस दिशा में अब तेजी से सुधार हो रहा है और विभिन्न कार्यालयों में हिंदी में कार्य करने को वरीयता दी जा रही है।

अरण्य: अपने जीवन के सबसे सुखद क्षण और अपनी रुचियों के बारे में बताएं।

मेरा मानना है कि हर क्षण सुखद है। प्रसन्नता व्यक्तिपरक होती है और हमें हर क्षण प्रसन्न रहना चाहिए। यदि हम खुद को छोटी-छोटी बातों से अप्रसन्न रखेंगे तो हम कभी भी प्रसन्नता का आनंद नहीं ले सकेंगे। ईश्वर से यह जीवन प्रसन्नता और आनंद से व्यतीत करने के लिए ही प्राप्त हुआ है। यदि हम अपने प्रत्येक कार्य को आनंद और पूरी ईमानदारी से करेंगे तो सकारात्मकता और प्रसन्नता हमारे आसपास ही रहेगी। प्रत्येक कार्य को स्वयं जांचकर और परखकर ही कोई प्रतिक्रिया देनी चाहिए। यह नियम हमारे व्यक्तिगत जीवन में जितना लागू होता है उतना ही सार्वजनिक जीवन में भी।

अरण्य: सरकारी अधिकारियों के व्यस्त सार्वजनिक जीवन और व्यक्तिगत जीवन में सामंजस्य स्थापित करने में उनके परिवार को अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इस संबंध में आपका क्या अनुभव रहा है?

यह सही है कि सरकारी सेवा में व्यस्तता के कारण कभी-कभी पारिवारिक जीवन में हम उतना समय नहीं दे पाते। किंतु, आपसी समझदारी और तालमेल से हम किसी भी परेशानी से बच सकते हैं। शुरुआती दिनों में दूरस्थ स्थानों पर तैनाती के कारण कुछ समस्याएँ आई लेकिन ये केवल कुछ समय के लिए ही थीं। जैसा मैंने पहले भी कहा कि समस्याओं को आपसी सहयोग से सुलझाया जा सकता है। मेरे परिवार ने इस संबंध में मुझे पूरा सहयोग दिया।

अरण्य: महोदय, विभिन्न सरकारी विभागों में अपनी सेवाएं देने के बाद एक प्रशिक्षण अकादमी की कार्यप्रणाली में आप क्या विशेष अंतर पाते हैं? परिवीक्षार्थियों के बीच राजभाषा हिंदी के प्रसार को किस प्रकार गति दी जा सकती है?

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी देश में वानिकी का अग्रणी प्रशिक्षण संस्थान है। यहां न केवल नए भा.व.से. अधिकारियों को वानिकी का व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जाता है अपितु सेवारत अधिकारियों व अन्य सेवाओं के अधिकारियों के लिए भी समय-समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इस प्रकार अकादमी की अधिकांश गतिविधियाँ इस प्रशिक्षण कार्य से ही जुड़ी हैं। अकादमी का अधिकतर कार्य समयबद्ध होता है जिसे किसी भी स्थिति में बाद के लिए नहीं छोड़ा जा सकता है। यही समयबद्धता अकादमी की कार्यप्रणाली को अन्य किसी कार्यालय से अलग करती है। एक विशेष बात यह है कि यहां फाइलों पर अधिकतम कार्य हिंदी में होता है जो अपने आप में विशिष्ट है। परिवीक्षार्थियों को हिंदी में कार्य करने के लिए और प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है जिससे वे भविष्य में जहां भी कार्य के लिए नियुक्त हों, उन्हें किसी समस्या का सामना न करना पड़े। इस हेतु हिंदी में अतिथि व्याख्यान और संकाय व्याख्यानों की संख्या को बढ़ाया जा सकता है।

अरण्य: महोदय, हिंदी को जन-जन की भाषा बनाने के लिए भविष्य में किस प्रकार के प्रयासों की जरूरत है? आप इस बारे में अकादमी के अधिकारियों और कर्मचारियों को क्या संदेश देना चाहेंगे?

मेरा मानना है हिंदी में न केवल देश को जोड़े रखने की क्षमता है बल्कि यह विश्व की प्रमुख भाषाओं के बीच अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। देश में हिंदी की ग्राह्यता लगातार बढ़ी है। सरकारी कार्यालयों में भी हिंदी में कार्य करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। हिंदी अब रोजगार की भाषा भी बन रही है। टीवी विज्ञापनों, फिल्मों, इंटरनेट आदि पर अब हिंदी का प्रयोग लगातार बढ़ रहा है। हिंदी में विभिन्न गोष्ठियों और कार्यशालाओं के माध्यम से भी इस दिशा में सकारात्मक परिणाम प्राप्त होंगे। जहां तक अकादमी का प्रश्न है, यहां अधिकांश कार्य हिंदी में ही हो रहा है। यदि सभी अधिकारी और कर्मचारी थोड़ा सा प्रयास और करें तो हम राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित वार्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति के साथ-साथ अपना शत-प्रतिशत कार्य हिंदी में कर पाने में सफल होंगे। मुझे विश्वास है, यह शीघ्र होगा।

अरण्य: महोदय, अपने व्यस्त कार्यक्रम में से अरण्य को समय देने के लिए आपका बहुत-बहुत धन्यवाद और भविष्य के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ।

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	रचना	रचनाकार	पृष्ठ
1.	घोंसला	डॉ० अंकुर अवधिया	1
2.	सुबह आयेगी	डॉ० शिवनन्दन पाण्डेय	3
3.	भाषा: निजता का प्रश्न	डॉ० सम्राट् सुधा	4
4.	रूह की कस्तूरी	डॉ० सम्राट् सुधा	5
5.	हिन्दी काव्य में प्रकृति संरक्षण	के.बी. पाण्डे 'उत्तम'	6
6.	गाँव की यादें	राजेश कुमार	10
7.	जंगल : चार प्रश्न	कुमार मनीष अरविन्द	11
8.	आओ मिलकर पौध लगायें	कुमार मनीष अरविन्द	12
9	बांस बीज-एक वरदान	योगेश पारधी, प्रमोद सिंह राजपूत	13
10.	ये रात सुहानी है, ये बात सुहानी है...	सचिन कुमार	15
11.	बिस्मिल्लाह	प्रद्युम्न गौरव	16
12.	प्रकृति	मंजुला शर्मा	17
13.	हिमराज और शशांक	डॉ० अंकुर अवधिया	18
14.	रेस्क्यू	डॉ० अंकुर अवधिया	19
15.	मकड़ी का मनोवैज्ञानिक सच	डॉ० राजेश कुमार मिश्रा	22
16.	चलो बीज बोते हैं	गिरिजा अरोड़ा	26
17.	प्रकृति और पर्यावरण एक दूसरे पर निर्भर हैं जबकि प्रदूषण एक मानवकृत समस्या है।	संगीता शाह 'शकुन'	27
18.	ये प्यार है	डॉ० सम्राट सुधा	28
19.	भारतीय संस्कृति और भस्म	वीणापाणी जोशी	45
20.	महात्मा गांधी-जैसा पढ़ा और समझा	सुश्री मीना गुप्ता	49
21.	पेड़ों की मुस्कुराती डालियां	ममता उप्रेती	51
22.	अनुवाद में होने वाली सामान्य भूलें	विजयराम नौटियाल	52
23.	बिखरती नहीं है नदी	डॉ० सम्राट सुधा	55

क्र.सं.	रचना	रचनाकार	पृष्ठ
24.	मैं छोटा हूँ	शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'	56
25.	क्यों न हो प्रकृति का संरक्षण इस तरह	निकिता राय एवं सौरभ दुबे	56
26.	वन अग्नि	प्रवीण चन्द्र डियूंडी	57
27.	कलैंडर साठ साल का	शांति प्रसाद 'जिज्ञासु'	58
28.	स्वतंत्रता प्राप्ति में असहयोग आन्दोलन की भूमिका	डॉ० राम भरोसे	59
29.	चाय के बहाने	डॉ० सम्राट सुधा	62
30.	हिमानी हवाएँ	डॉ० सम्राट सुधा	62
31.	वनरक्षक	अभिषेक जोगावत	63
32.	ओजोन परत : सीमान्तक छत	कुमार मनीष अरविन्द	63
33.	इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी में राजभाषा नीति का अनुपालन : एक रिपोर्ट	चमन सिंह	64

'अरण्य' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार/मंतव्य/दृष्टिकोण पूर्णतः संबंधित लेखकों/कवियों/रचनाकारों के अपने हैं। इनसे सम्पादक मण्डल/अकादमी का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

घोंसला

डॉ. अंकुर अवधिया, भा.व.से., 2014, म.प्र. संवर्ग

"वह फिर आ गई!"
यह मेरी घोषणा थी।
"अच्छा!"
माँ का स्वर अन्यमनस्क था।
"वहाँ कचरा फैला है।"
मैंने जोर देकर कहा।
"तो मैं उसे साफ करवा दूँगी।"
माँ ने मुझे शांत करने के लिए कहा।
पर मुझे तो चिढ़-सी लग रही थी। क्या माँ मेरे मन की बात समझ ही नहीं पा रही है?
"उसे यही जगह मिली है क्या?
समझ में नहीं आता उसे कि इतना नीचे घोंसला बनेगा तो उसके बच्चों को कोई भी निकाल लेगा? वो मर जाएँगे!"
मैं इतना उत्तेजित हो रहा था कि साँसें ही रुक रही थीं।
"तो तू क्यों इतना सोच रहा है?
यह सोचना तो उसका काम है!"
बात सही थी। पर फिर मैंने भी अपने मन की कह दी।
"मैंने वो घास-फूस हटा दिया है। अब तो उसे कहीं और जाना ही पड़ेगा!"

दिन की शुरुआत माँ-बेटे की नोंक-झोंक के साथ ही हुई थी। नोंक-झोंक का एक विषम विषय था: चिड़िया का बनता घोंसला! एक चिड़िया हमारे घर में बिजली के मीटर पर अपना घर बसाना चाह रही थी। पर मीटर नीचे था। ऊँचाई सिर्फ छह फीट! मतलब यह कि हाथ बढ़ाओ तो घोंसला हाथ में! और मुझे इसी बात की चिंता हो रही थी कि अगर मेरा हाथ पहुँच सकता है तो किसी का भी हाथ पहुँच सकता है। फिर हर हाथ एक-सा तो नहीं होता। सर पर माँ का हाथ शांति देता है, पर गर्दन पर कसाई का हाथ तो एक ही चीज दे सकता है: मौत! न जाने घोंसले पर कौन सा हाथ पड़े?

फिर शरणागत की रक्षा तो हम हिंदू अपना कर्तव्य मानते हैं। और यहाँ मेरी नजर के सामने ही एक शरणागत चिड़िया के घोंसले पर उजड़ने का खतरा नंगा नाच कर रहा था! मेरा व्यग्र होना स्वाभाविक था।

पर मम्मी को तो जैसे कोई फर्क ही नहीं पड़ रहा था! तो क्या मैं ही अधिक व्यग्र हो रहा था? समझ नहीं पा रहा था।

"तो तू क्यों इतना सोच रहा है?" मम्मी का यह कहना भी तो सही था। मेरे सोचने से क्या होना था? आईआईटी से जब पढ़ाई की थी तब भी पढ़ा था ईवोल्यूशन के बारे में। जानता था कि अगर कोई चिड़िया अपने घोंसले के लिए गलत जगह चुनती है तो उसके बच्चे मर सकते हैं। अगर ऐसा हुआ तो गलत जगह चुनने के जीन्स अगले जनरेशन तक नहीं पहुँचेंगे। धीरे-धीरे ऐसे जीन्स का आबादी से विलोपन हो जाएगा। और सही जगह चुनने के जीन्स आबादी में ज्यादा फैल जाएँगे। नैचुरल सलेक्शन की यही तो थ्योरी है! मुझे जबानी याद थी! तो अगर चिड़िया ने यहाँ घोंसला बनाना चाहा है तो यह जगह इतनी भी गलत नहीं हो सकती।

आखिर यहाँ साँप-बिल्ली तो नहीं चढ़ सकते। सिर्फ आदमी का ही तो खतरा था। और मेरे घर के लोग ठहरे शुद्ध शाकाहारी। तो यह खतरा भी नगण्य था। यह जानते हुए भी मैं कुछ व्याकुल-सा हो रहा था।

कहते हैं कि हर बात विज्ञान से नहीं समझाई जा सकती। पर अगर साईस की जगह आस्था के बारे में सोचें, तो भी तो मैं आस्तिक ही था। पढ़ा भी था, और भरोसा भी करता था, कि "जेहि बिधि राखे राम, तेहि बिधि रहिये।" अभी कुछ महीने पहले ही तो गाँधीजी की गीता भी दुबारा पढ़ी थी। कर्म और भाग्य का अंतर जानते हुए भी मुझमें इतनी अधिक व्याकुलता व्याप्त थी। आखिर ऐसा क्यों था?

शायद इसलिए कि मुझे तब अपने घर का पहला दिन बार-बार याद आ रहा था। अन्य सरकारी मकानों की तरह मेरा मकान भी काफी बड़ा था। बड़ी-बड़ी खिड़कियाँ और रोशनदान थे इसमें। कई कमरे थे। अब अगर कहीं मकान बना हो, तो कोई न कोई तो इसे अपना घर बनाएगा ही! आदमी न बना पाए, तो जानवरों, चिड़ियों का घर ही सही! जब मैं इस मकान में पहले दिन आया था, तो एक दरवाजे के ऊपर डव चिड़िया का बसेरा देखा था। दो बच्चे भी थे उसमें। काफी बड़े-बड़े बच्चे, मानो बस उड़कर जानेभर की देर हो! मेरे साथ दो सरकारी कर्मचारी थे, जो मुझे मकान दिखाने आए थे। साथ ही कुछ सफाई और मरम्मत का काम भी उन्हें करवाना था। उन्हें मैंने स्पष्ट निर्देश दिए कि मुझे चिड़ियों से काफी लगाव है। अत: इस बसेरे को वे ऐसे ही रहने दें। इसका कुछ न करें, और जब मकान की सफाई हो, तब भी इस बात का विशेष ध्यान रखें।

पर उसी शाम को ही बुरी खबर आई। दोनों कर्मचारियों ने पास आकर माफी माँगी। कहा कि जब उनका ध्यान नहीं था, तब कुछ मजदूरों ने चिड़िया के बच्चे चुरा लिए! और बसेरे की जगह झाड़-पोंछ कर साफ कर दी!

घटना को याद करके ही मेरे दिल में एक टीस-सी होने लगी थी तब। लग रहा था कि यही हाल इस 'स्केली-मुनिया' के घोंसले का भी होने वाला था! तो क्या दुबारा मुझे यह टीस झेलनी पड़ेगी? कुछ तो उपाय करना ही था इस समस्या का!

जो उपाय मुझे समझ आया, वह ये था कि यहाँ घोंसला बनने ही न पाये! न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी! रोज के जमा तिनके फेंकना ही सही होगा!

फिर क्या था, कुछ दिन तक यही कारोबार चला। रोज शाम ऑफिस से आकर घर में घुसते ही दिनभर चिड़िया की मेहनत के जमा तिनके मैं निकाल देता था। और रोज ही दिल में कहीं यह आकाँक्षा रहती थी कि अब तिनके नहीं मिलेंगे। चिड़िया अपने घोंसले की जगह बदल देगी!

पर वह चिड़िया एकदम हठी निकली! दिन-प्रतिदिन वह मुझे जैसे अचंभित करना चाह रही थी! दो अंगुल भर की चिड़िया आखिर रोज इतने तिनके जमा कैसे कर सकती थी, मेरी समझ के तो परे था! और यह देखकर भी कि इस जगह उसका घोंसला बन ही नहीं पा रहा, वह अपनी जगह छोड़ना ही नहीं चाहती थी!

शायद वह यह जानती थी कि जब दो हठी लोगों में भिड़ंत होती है, तो किसी-न-किसी को तो आखिर झुकना ही पड़ता है! हफ्ता-दस दिन के बाद मैंने सोचा कि मुझे जितना समझाना था इस चिड़िया को, सो मैंने कर लिया। अब जो होना है, वह यह चिड़िया जाने और इसका नसीब जाने! अब मैं इसका घोंसला नहीं हटाऊँगा!

उसके बाद चिड़ा-चिड़िया ने मिलकर जो मेहनत की, वह सचमुच देखने लायक थी। बड़ी-बड़ी घास के तिनकों और पत्तियों की बुनाई हो रही थी। घास के फूल, जो रोएँ-सदृश कोमल थे, घोंसले के भीतर तकिये की तरह रखे जा रहे थे। और दो दिन के भीतर घोंसला पूरी तरह तैयार था! और चिड़िया नदारद!

मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था! जब रहना नहीं था, घर बसाना नहीं था, तो घोंसला क्यों बनाया? आखिर इतनी मेहनत क्यों की गई?

अगले पाँच-दस दिन तक मैं रोज घोंसले को देखता। सोचता, कि उन चिड़ियों का क्या हुआ? कहीं उनका शिकार तो नहीं हो गया? उनका घोंसला जैसे मुझे रोज याद दिला रहा था उन दो पक्षी-परिवारों का जो इस घर में बस नहीं सके!

जब मैं पूरी तरह निराश हो गया तब चिड़ियों ने मुझे फिर अचरज में डाला! एक दिन सुबह मैंने चिं-चिं की आवाज सुनी। ऐसी जैसे कई पक्षी एकसाथ सुर में सुर मिलाते हुए कलरव कर रहे हों। फिर आवाज शांत हो गई। मुझे लगा कि घर के बाहर शायद चिड़ियों का जमघट था, जो चला गया।

पर फिर चिं-चिं का कलरव होने लगा। बाहर देखा तो कोई चिड़िया नहीं थी। पर चिं-चिं का कलरव लगातार चल रहा था। फिर नजर पड़ी घोंसले पर। आवाज वहीं से आ रही थी। और उस घोंसले के कुछ तिनके हिल रहे थे!

मेरी खुशी की कोई सीमा न थी! उसी समय तय किया कि अब ये नन्हे-मुन्ने चूजे मेरे मेहमान हैं। घर में सभी को बता दिया कि इस घोंसले को कोई न छेड़े। सामने के दरवाजे पर भी ताला जड़ दिया कि बाहरी लोग इन मेहमानों को कोई नुकसान न पहुँचा सकें। हालाँकि घर आने-जाने वालों को इस ताले की वजह से कुछ असुविधा अवश्य हो रही है, क्योंकि कॉल-बेल उस ताले वाले दरवाजे को पार करके ही मिलता है। इसलिए गला फाड़कर चिल्लाना ही उनका इकलौता 'ऑप्शन' रह गया है। पर घोंसला सुरक्षित है। और मैं रोज अपने अतिथियों की चिं-चिं का आनंद ले रहा हूँ!

सुबह आयेगी

डॉ. शिवनन्दन पाण्डेय
स. पु. एवं सूचना अधिकारी
कार्यालय निदेशक (विज्ञान)
भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण
29-न्यू कैंट रोड, हाथीबड़कला, देहरादून।

निस्तब्ध निशा,
कलरवहीन वन, मन अशान्त
माँ के आंचल में, घरौंदो में,
कोटरों में, नन्ही सी जान
बार-बार पूछ रहा है,
माँ सुबह कब आयेगी
थपकी देकर, माँ सुलाती
बच्चे को समझाती
सो जा बच्चे, रात जायेगी।
घनघोर घटा की नीरवता
चुपके से हट जायेगी
सूरज की पहली किरण
जब धरा पर आयेगी।
बेटे, धीरज रख
सुबह आयेगी, अवश्य आयेगी।
बच्चा बारम्बार मचलता है।
माँ की गोद में उछलता है
माँ, मुझे जल्दी सूरज दिखाओ
ना मिले, तो कहीं से खरीद लाओ।
माँ पुन: बोली, बेटा जिद मत कर
समय से पहले, ज्यादा पाने को
जो भी मचलता है, उछलता है,
मिलता तो कुछ भी नहीं,
पर लालसा में भटकता है।
ऐ मेरे लाल, धीरज रख
सुबह आने में लगेगा थोड़ा वक्त।
माँ की वह सीख, आज भी मुझे याद है।
वक्त से पहले, पाने का, बहुतों ने किया प्रयास है।
वक्त अच्छा होगा, तो रात भी मुस्करायेगी।
वक्त बिगड़ा तो कुछ भी हाथ ना आयेगी।
अच्छा सोचो, सच्चा सोचो सुबह आयेगी, जरूर आयेगी।
जीवन के सारे तिमिर यूं उड़ाकर ले जायेगी,
जिन्दगी खुशहालकर, गले लग जायेगी।
सुबह आयेगी, आयेगी, आयेगी।।

भाषा: निजता का प्रश्न

डॉ. सम्राट् सुधा, शिक्षाविद् एवं साहित्यकार, गणेशपुर, रुड़की

भाषा एक माध्यम है, अपने विचार दूसरे तक संप्रेषित करने और दूसरे के विचारों को समझने का। पत्रिका 'अरण्य' के गत अंक -16 में इस लेखक द्वारा सुस्पष्ट किया गया था कि भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त और एकमात्र माध्यम नहीं है। भाषा क्या तकनीकी से प्रभावित होती है, यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है, जो भाषाई सम्प्रेषण के नव तकनीकी उत्पादों के जन के हाथों में आने के पश्चात् भाषाविदों के समक्ष उत्पन्न हुआ। इसी के साथ चिंतन का एक बिंदु यह भी उपस्थित हुआ कि क्या शीघ्रता, आर्थिक लाभ, विशिष्ट बुद्धिमत्ता प्रदर्शन आदि के लिए किसी भी भाषा के स्वाभाविक एवं मूल स्वरूप से छेड़छाड़ की जानी उचित है?

भाषा सम्प्रेषण के तकनीकी उत्पादों के कारण अपने मूल स्वरूप से छिन्न-भिन्न होती है, इसमें दो मत नहीं! मोबाइल फोन आने के बाद 'शॉर्ट सर्विसेज मैसेज' भेजने के लिए उपभोक्ताओं ने हिंदी के संग अंग्रेजी वर्णों या गणित के अंकों को जोड़ मैसेज भेजने के लिए अपनी ही एक नयी भाषा विकसित की। तथ्य यद्यपि यह है कि ऐसी भाषा आज से लगभग 141 वर्ष पूर्व आधुनिक हिंदी के जनक भारतेन्दु हरिश्चंद्र द्वारा अपनी कतिपय कविताओं में प्रयुक्त की गयी थी।

"Gबहु Eस अCस बल हरहु प्रजन की रि /सरU जमुना गंग मैं जब लौं थिर जग नी/J Kबल तुम दास हैं नासहु तिनकी R / बढ़ै सY तेज नित Iको अचल लिलार / भारत के Aकत्र सब Vर सवा बल Pन/Bसहु बित्वा ते रहैं तुमरे नितहि अधीन।"

भारतेन्दु ने अपनी इस कविता को किन्हीं 'राज राजेश्वरी आर्य्येश्वरी भारताधिश्वरी श्री 108 विजयिनी देवी' को समर्पित किया था। स्वाभाविक है कि उस समय भारतेन्दु द्वारा उपर्युक्त भाषाई प्रयोग किसी तकनीकी साधन की उपलब्धता के कारण नहीं था। दूसरा प्रश्न किसी भी भाषा में उपर्युक्त प्रकार के 'प्रयोगों' या अन्य भाषा के पूरे- पूरे शब्दों के सम्मिलन को लेकर है। हम सभी जानते हैं कि कम से कम अपने देश में कोई भाषा या बोली अपने विशुद्धतम रूप में नहीं है। घर-घर में दूरदर्शन की पैठ है और यह मात्र 'दूर का दर्शन' ही ना हो, नयी भाषा या कुछ नहीं तो अन्य भाषा के एकाध शब्द सीखने का माध्यम तो है ही! उत्तर भारत में विशेषत: अपनी बोली विशेष के समक्ष प्रचलित तथाकथित भाषा या अन्य बोली को महत्व देने की मानसिकता से सभी परिचित हैं। भाषा के प्रति यह आकर्षण हास्यास्पद तो है ही, अनेक बार यह अर्थ स्पष्ट करने में भी असमर्थ रहता है। यज्ञोपवीत, यज्ञसूत्र है, इसे 'हॉली थ्रेड' कहने से, इसके पूर्ण अर्थ का निरूपण नहीं हो सकता। 'सम्पूर्ण' के साथ 'रात्रि' और 'तमाम' के साथ 'रात' का मेल है, जो यह बताता है कि भाषा मात्र कह देना नहीं, वरन् उसकी लयात्मकता भी महवपूर्ण है, जो प्राय: एक भाषा में उसी भाषा विशेष के शब्दों के माध्यम से रूप ले सकती है।

वैयक्तिक भाषा के साथ सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि इसे सीखे, चिंतन किये जाने या प्रशिक्षण से जोड़कर देखा ही नहीं जाता। हम निज उपयोग के उत्पादों के लिए खोज करते हैं, सलाह लेते हैं और छोटा मोटा प्रशिक्षण भी लेते हैं, परंतु अपनी ही भाषा या बोली के लिए ऐसा नहीं करते। सर्वेक्षण किया जाए कि कितने घरों में उनकी भाषा या बोली से संबद्ध शब्दकोश है, तो आश्चर्यजनक तथ्य सामने आयेंगे। जहाँ शब्दकोश हैं भी, वहाँ वे खुले कब थे, इस सन्दर्भ में तो और चौंकाने वाले तथ्य मिल सकते हैं। पुस्तकालयों में सबसे कम खोले जाने वाला ग्रन्थ शब्दकोश है, यह अपने अध्यापकीय जीवन के अनुभव से यह लेखक कह रहा है। ऐसी स्थिति में भाषा से व्यावसायिक रूप से जुड़े कर्मियों के अतिरिक्त अन्य से भाषा या बोली विशेष के प्रांजल स्वरूप को बनाये रखने की बात सोची भी कैसे जा सकती है! जबकि, सच यही है कि भाषा अपना स्वरूप लेती तो सामान्य जान के मध्य ही है!!

भूमंडलीकरण के समय राजभाषा हिंदी का जनप्रचलित रूप 'हिंग्लिश' उभरा। अभिव्यक्ति कि हिंदी में तो कई बार आज भी यह समझ पाना कठिन हो जाता है कि बोले जा रहे संवाद की मूल भाषा हिंदी ही है या वह अंग्रेजी से रूपांतरित है। शब्दकोशों के शब्द भण्डार में दिन प्रतिदिन नये शब्द सम्मिलित हो रहे हैं, परन्तु ये शब्द जन के दिन प्रतिदिन के व्यवहार के साधन तो नहीं! क्या भाषा या बोली का विधिवत अध्ययन मात्र भाषाविदों और भाषा सम्बद्ध कर्मियों का ही दायित्व है अथवा जिस जन पर उन्हें रूप देने का अपेक्षाकृत अधिक उत्तरदायित्व! यह प्रश्न, जैसा कि पूर्व में कहा गया कि भाषा या बोली वस्तुत: हमारे चिंतन का विषय ना हो, मात्र व्यवहार का हेतु ही है, इस तथ्य से स्वयं प्रश्नांकित हो जाता है! फर्डिनेड द स्योसार ने भाषा को 'चिह्न', बताया, तो उसकी अर्थवत्ता को लेकर एक नया विचार सामने आया। उन्होंने कहा - 'भाषा अविकल चिह्नों का एक ऐसा तंत्र है, जिसमें चिह्न यानि शब्द आपसी अनंतर से अर्थ ग्रहण करते हैं; अर्थ के लिए एक- दूसरे पर निर्भर हैं; स्वयं का कोई अर्थ एवं अस्तित्व नहीं रखते।' स्योसार की उक्त परिभाषा से ऐसा लगता है कि भाषा पर उसे प्रयुक्त करने वाले का कोई अधिकार नहीं है। भाषा का अर्थ हमारे हाथ में नहीं, वरन् भाषा के ही हाथ में है, तो हमें यह भी समझना होगा कि भाषा हम नहीं बोलते, वरन् भाषा ही हमें अभिव्यक्ति देती है, वह भी अपनी स्वायत्तता के संग! ऐसे में भाषा या बोली के स्तर पर हमें गंभीर होना ही होगा!

प्रत्येक भाषा या बोली का अपना इतिहास ही नहीं होता, वरन् उसका अपना संस्कार और सौंदर्य भी होता है! हम जिस प्रकार किसी अन्य क्षेत्रीय व्यक्ति को अपना आतिथ्य तो देते हैं, परंतु विधिविधान हमारा अपना ही रहता है, उसी भांति भाषा या बोली की अस्मिता को लेकर सजग रहें, तब ही उसकी निजता और वृहद् अर्थ में कहें तो विशिष्टता स्थिर रह सकती है।

रूह की कस्तूरी

सूर्य से कहा मैंने
साथ चले सफर में
शाम थी
जम्भाई ले लुढ़क गया दिनकर
कभी प्रात: आया भी
मेघ से भयभीत हो
बन गया भीगी बिल्ली
दमका
तो इतना कि
मैं ही ढूंढने लगा छाया
अब
चाँद से मनुहार की मैंने
वो आधे माह अनुपस्थित रहा
कभी अर्धमना:
पूरा हुआ तो पुजता रहा गर्व से
कर गया सुना- अनसुना
सितारों से क्या कहता
उनमें ठसक बहुत थी दम कम
फिर एक दिन
होते- होते निराश ही लगभग
जाने क्या सोच
तुम अपने प्यार की अदृश्य कस्तूरी
रख गये रूह में
और मैं जाने कितने जनमों से
एक तय समय बाद
सारी यात्राएँ करता हूँ
भीतर ही भीतर महकते ..
मैं मृग नहीं हूँ !!

डॉ. सम्राट सुधा
शिक्षाविद् एवं साहित्यकार, रुड़की

प्रबंधकार तुलसी ने प्रकृति से संदेश एवं तथ्य ग्रहण करते हुए जल की महत्ता को रेखांकित किया है। मानस में द्रष्टव्य है –

फल मारन नमि विटप सब रहे भूमि नियराइ।
पर उपकारी पुरुष जिमि नवहिं सुसम्पत्ति पाइ।।

तुलसी के काव्य में प्रकृति चित्रण की सहज परंपरा विद्यमान तो है ही, साथ ही वे राम के माध्यम से प्रकृति के चर जगत से उनका संवाद बनाने का प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं –

हे खग, हे मृग, हे मधुकर श्रेनी
तुम्हीं देखी सीता मृगनयनी।।

उन्होंने वृक्षों के महत्व को इंगित करते हुए 'रामचरितमानस' में लक्ष्मण और सीता को वृक्षारोपण करते हुए दिखाया है –

''तुलसी तरुवर विविध सुहाए।
कहुँ-कहुँ सिय, कहुँ लखन लगाए।''

वहीं भक्तिकालीन परम्परा के कवि कबीरदास जी ने वृक्षों व नदियों के हितैशी-भाव को दर्शाते हुए कहा है–

वृक्ष कबहुँ न भल भखै, नदी न सँचे नीर ।
परमारथ के कारने, साधुन धरा सरीर ।।

और आगे; पर्यावरणप्रेमी, पर्यावरण के प्रहरी, प्रचारक और प्रसारक के रूप में कबीर कहते हैं :

'डाली छेड़ूँ न पत्ता छेड़ूँ, न कोई जीव सताऊँ।
पात-पात में प्रभु बसत है, वाही को सीस नवाऊँ।।'

कबीर की इंसानियत और ईमानदारी ही उन्हें पर्यावरण की रक्षा के लिए जागरूक करती है । तभी तो कबीर कहते हैं:

'रे भूले मन वृक्षों का मत लेरे।
काटनिये से नहीं बैर है, सींचनिये से नहीं सर्वहरे।
जो कोई वाको पत्थर मारे वाह को फल देरे।

मनुष्य और पशु परस्पर एक-दूसरे पर निर्भर हैं। हिन्दू धर्म में गाय, कुत्ता, बिल्ली, चूहा, हाथी, शेर और यहां तक कि विषधर नागराज को भी पूजनीय बताया है। चिड़ियों और कौओं के लिए घर की मुंडेर पर दाना-पानी रखा जाता है। नागपंचमी के दिन नागदेव की पूजा की जाती है। नाग-विष से मनुष्य के लिए प्राणरक्षक औषधियों का निर्माण होता है। नाग पूजन के पीछे का रहस्य ही यह है। हिन्दू धर्म की विशेषता है कि वह प्रकृति का संरक्षक है। मकर संक्रान्ति, वसंत पंचमी, महाशिवरात्रि, होली, नवरात्र, गुड़ी पड़वा, वट पूर्णिमा, ओणम्, दीपावली, कार्तिक पूर्णिमा, छठ पूजा, शरद पूर्णिमा, अन्नकूट, देव प्रबोधिनी एकादशी, हरियाली तीज, गंगा दशहरा आदि सब पर्वो में प्रकृति संरक्षण का पुण्य स्मरण है।

आज प्रदूषण से मलिन पड़ी हुई चाँदनी के सापेक्ष मैथिलीशरण गुप्त की प्राकृतिक चाँदनी स्वच्छ और मनोहारी है। द्रष्टव्य है–

''चारू चंद्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल थल में,
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि और अम्बरतल में।''

ऐसे ही, जो वर्षा संयोगावस्था में प्रेमिका के पास रहने मात्र से कितनी उल्लसित हो जाती है, वही वर्षा-ऋतु वियोगावस्था में उद्वेग उत्पन्न करती है। उसका एक मनोरम चित्रण तुलसी ने इस प्रकार किया है –

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रिया हीन डरपत मन मोरा

आधुनिक हिन्दी काव्य से अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' अपने 'प्रिय-प्रवास' में राधिका की हृदय-व्यथा प्रकृति के उपादानों में व्यंजित करते हैं। कृष्ण भी अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति में प्राकृतिक प्रतीकों का सहारा लेते प्रतीत होते हैं –

"उत्कंठा के विवष नभ को, भूमि को पादपों को।
ताराओं को मनुज मुख को प्रायषः देखता हूँ।
प्यारी ! ऐसी न ध्वनि मुझको है कहीं भी सुनाती।
जो चिंता से चलित-चित की शान्ति का हेतु होवें।"

छायावादी काव्य शैली के कवि यथा 'पंत', 'प्रसाद' और 'निराला' को प्रेयसी का प्रेम, प्रकृति के सामने व्यर्थ दिखाई देता है। पंत कहते हैं–

"छोड़ द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया,
बाले, तेरे बाल-जाल में, कैसे उलझा दूँ लोचन,
भूल अभी से इस जग को।"

'कामायनी' के आरम्भ में जयशंकर प्रसाद ने प्रकृति के भयानक रूप का वर्णन किया है। जिसमें जल-प्रलय के कारण सब-कुछ नष्ट हो जाता है। शायद वे मनुष्य की उस हवस की ओर इशारा करना चाहते हैं जिसके कारण प्रकृति का विनाश हुआ–

हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर
बैठ शिला की शीतल छाँह।
एक पुरुष भीगे नयनों से,
देख रहा था प्रलय-प्रवाह ।

प्रकृति की उर्वरा-शक्ति के क्षरण से क्षुब्ध शायर कराह उठता है –

जिस खेत से दहकाँ को मयस्सर नहीं रोज़ी।
उस ख़ेत के हर ख़ोशा-ए-गुंदम को जला दो।।

या कि मिट्टी से रिश्ता तोड़ने की कीमत क्या होती है, यह समझने का विषय है –

अब मैं राशन की कतारों में नजर आता हूँ ।
अपने खेतों से बिछड़ने की सजा पाता हूँ ।।

ऋतुओं के आने-जाने से प्रकृति का नवीनीकरण होता रहता है । अन्यथा–

ऐ बुलबुलों खिजां में भी शुक्र-ए-खुदा करो,
तिनके कहाँ से लाओगी मौसमे-बहार में।

प्रकृति के प्रति मनुष्य के भोगवादी दृष्टिकोण ने जीवन को खतरे में डाल दिया है। 'बंगाल का अकाल' में नागार्जुन ने भोगवादी दृष्टिकोण के कारण अकाल का मार्मिक विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा है –

''कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास।
कई दिनों तक कानी कुतिया, सोई उनके पास।
कई दिनों तक लगी भीत पर, छिपकलियों की गश्त।
कई दिनों तक चूहों की भी, हालत रही शिकस्त।''

वैज्ञानिक प्रयोगों ने भी प्रकृति को नष्ट करने का प्रयास किया है। यह भोगवादिता का परिणाम है। आणविक युद्धों के बाद मनुष्य का बच पाना सम्भव नहीं है तो प्रकृति का क्या हाल होगा ?

अज्ञेय ने कहा कि **'मानव का रचा हुआ सूरज मानव को भाप बनकर सोख गया।'**

भूमण्डलीकरण और बाजारवाद का सबसे पहले शिकार बना-पर्यावरण । परिणाम स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल, शुद्ध फल, शुद्ध भोजन का भी अभाव उत्पन्न हो गया है। केदारनाथ सिंह ने इस त्रासदी की ओर ध्यान आकृष्ट किया है –

''अब देखिये न,/लम्बे समय के बाद/कल
मेरे तट पर एक चील आई /प्रभु,
कितनी कम चीलें दिखती हैं आज कल।
आपको तो पता होगा कहाँ गयीं वे ?/
पर जैसे भी हो एक वह आई/जाने
कहाँ से भटक कर/और बैठ गयी मेरे बाजू में/
उसने चौंककर पहले इधर उधर देखा ।
फिर अपनी लम्बी चोंच गड़ा दी/मेरे सीने में।

हिन्दी काव्य में प्रकृति संरक्षण

के.बी. पाण्डे 'उत्तम', भारतीय सैन्य अकादमी, देहरादून

इस देश की सनातन परम्पराओं में प्रकृति को बहुत महत्व दिया गया है। हिन्दू धर्म की समस्त पूजा पद्धतियों में प्रकृति का आह्वान किया जाता है। भारतीय दर्शन की मान्यता है कि मानवीय कल्याण के समस्त स्रोत प्रकृति में उपस्थित हैं। यहाँ धरती और नदियों को माँ की संज्ञा और सम्मान प्राप्त है। विभिन्न वनस्पतियों, पेड़-पौधों, जीव-जन्तुओं, वायु, अग्नि, जल, पर्वतों यहाँ तक कि पत्थरों को भी देवी-देवताओं के प्रतीकों का दर्जा प्राप्त है। आरोग्यता और दीर्घ-जीवन के मूल में औषधीय पादपों के प्रयोग का खजाना आयुर्वेद चिकित्सीय पद्धति में मौजूद है। यौगिक प्रक्रियाएँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकृति के साथ तादातम्य स्थापित करने की प्रणालियाँ हैं। ऋषि-मुनियों को भान था कि यदि प्रकृति और मनुष्य के बीच मानवीय सम्बन्ध विकसित न किए गए तो प्रकृति का संरक्षण कर पाना सम्भव नहीं है । इसी चिंतन ने भारतीय संस्कृति के हर अवयव को प्रकृति से सम्बद्ध करने में महती भूमिका निभाई। दूसरे शब्दों में, भारतीय जीवन पद्धति की मूल धारणा भौतिकवादी न होकर धार्मिक, आध्यात्मिक, सार्वभौम कल्याण और प्रकृति पर अन्योन्याश्रित की रही है।

प्रकृति के संरक्षण के लिए पश्चिम में मजबूत परंपराएं भी नहीं हैं। इसके उलट, प्रकृति संरक्षण का कोई संस्कार अखण्ड भारतभूमि को छोड़कर अन्यत्र देखने में नहीं आता है। यहाँ प्रकृति पूजन ही प्रकृति संरक्षण का उपकरण है। पेड़-पौधों, नदी-पर्वत, ग्रह-नक्षत्र, अग्नि-वायु सहित प्रकृति के विभिन्न रूपों के साथ मानवीय रिश्ते जोड़े गए हैं। पेड़ की तुलना संतान से की गई है। फिर भी भौतिक विकास की अंधी दौड़ में यहाँ पर भी प्रकृति को न्यूनाधिक नुकसान तो हुआ ही है। सुखद है कि भारत के सनातन संस्कारों के कारण भारत में प्रकृति का क्षरण उस गति से और उस सीमा तक नहीं हुआ है, जैसा पश्चिम में हुआ।

हिन्दुत्व वैज्ञानिक जीवन पद्धति है। हिन्दू दर्शन 'जियो और जीने दो' के सिद्धांत पर आधारित है। इसका सह-अस्तित्व का सिद्धांत ही प्रकृति के प्रति संजीदगी दर्शाता है। वैदिक वाङ्मयों में प्रकृति के प्रत्येक अवयव के संरक्षण और संवर्द्धन के निर्देश मिलते हैं। हमारे ऋषि जानते थे कि पृथ्वी का आधार जल और जंगल है। इसलिए उन्होंने पृथ्वी की रक्षा के लिए वृक्ष और जल को महत्वपूर्ण मानते हुए कहा है- **'वृक्षाद् वर्षति पर्जन्यः पर्जन्यादन्न सम्भवः'** अर्थात् वृक्ष जल है, जल अन्न है, अन्न जीवन है।

जंगल को हमारे ऋषि आनंददायक कहते हैं- **'अरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु।'** यही कारण है कि हिन्दू जीवन के चार महत्वपूर्ण आश्रमों में से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास का सीधा संबंध वनों से ही है। हिन्दू संस्कृति में वृक्ष को देवता मानकर पूजा करने का विधान है। वृक्षों की पूजा करने के विधान के कारण हिन्दू स्वभाव से वृक्षों का संरक्षक हो जाता है। सम्राट विक्रमादित्य और अशोक के शासनकाल में वन की रक्षा सर्वोपरि थी। चाणक्य ने भी आदर्श शासन व्यवस्था में अनिवार्य रूप से अरण्यपालों की नियुक्ति करने की बात कही है।

छान्दोग्यउपनिषद् में उद्दालक ऋषि अपने पुत्र श्वेतकेतु से आत्मा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि वृक्ष जीवात्मा के सदृश होते हैं और वे सुख-दु:ख की अनुभूति करते हैं। हिन्दू दर्शन में एक वृक्ष की मनुष्य के दस पुत्रों से तुलना की गई है-

'दशकूप समावापीः दशवापी समोहृदः।
दशहृद समरूपुत्रो दशपत्र समोद्रुमः।।

मानव के शरीर का निर्माण जिन पाँच तत्वों से हुआ है, वे प्रकृति के ही मूलभूत अंग हैं। अतः मानव मन में प्रकृति के प्रति प्रेम अस्वाभाविक नहीं है। सभी सर्जनाएँ प्रकृति के पाँच तत्वों से निर्मित, पोषित और अन्ततः इन्हीं में समाहित हो जाती हैं। यही है मानव सहित सभी सजीवों की जैविकी। भारतीय वाङ्मय के आदि-ग्रंथ वेद हैं। इनमें वर्णित प्राकृतिक चित्र आर्य-संस्कृति के प्रकृति-प्रेम को उत्खनित करते हैं, जैसे-

ओ३म् द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी
शान्तिः रापः शान्तिरोषधयः शान्तिः।
वनस्पतयः शान्ति र्विष्वेदेवाः
शान्ति र्ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः।
शान्ति रेव शान्तिः सा मा शान्ति रेधि।
ऊँ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

महर्षि वाराहमिहिर ने बृहत्संहिता में खगोलशास्त्र, ग्रहों की गति, ग्रहण, वर्षा, बादल , कृषि-उत्पादन , रत्न से मानवीय कल्याण के उपाय सुझाये हैं। धन्वंतरी ने पेड़-पौधों के औषधीय गुणों की पहचान करते हुए उनके संरक्षण और संवर्द्धन की आवश्यकता को सिद्ध किया है। कालान्तर में महर्षि पतंजलि, महर्षि चरक और महर्षि सुश्रुत आदि ने इस विधा का अग्रसारण किया। इसी कड़ी में आदिकालीन, मध्यकालीन और आधुनिक भारतीय कवियों ने भी प्रकृति व पर्यावरण के महत्व पर अपनी कलम चलाई।

आदिकवि वाल्मीकि ने जब प्रकृति में मुक्त विहार करते हुए दो पक्षियों को आखेटक के बाण से चोटिल होते हुए देखा तो उनके मन में करुणा का क्रन्दन फूट पड़ा। यह प्रकृति के प्रति कवि के अगाध प्रेम का परिचायक है । यहाँ पर कवि न केवल प्रकृति के अनुपम रूप पर मोहित है वरन उस पर संकट आने की स्थिति में संतप्त भी है। ऐसी स्थिति सर्वथा त्याज्य होनी चाहिए, यह उनकी रचना का संदेश है। इसी निमित्त कविता का जन्म हुआ-

"मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वामगमः शाश्वती समः।
यत्क्रौंचयों मिथुनादेकमवधी काम मोहितम्।।"

महाकवि कालीदास ने अपने काव्य के माध्यम से मानवीय सौन्दर्य के विभिन्न विम्बों व उपमानों के साथ प्रकृति के साथ आत्मसात करने का प्रयास किया है। प्रकृति के तत्वों में नारी सौन्दर्य को अवस्थित करने का प्रयोजन वास्तव में साहित्य की हर विधा के साथ लोकमंगल की भावना को आगे बढ़ाना है। वे प्रकृति को चेतन मानते हैं, चराचर प्रकृति में उन्हें स्पन्दन की अनुभूति होती है। 'मेघदूत' में उज्जयिनी की तरफ जाते हुए बादलों को मार्ग में पड़ने वाली निर्विन्ध्या सरिता विभिन्न भाव-भंगिमाओं से अपनी ओर आकृष्ट करती है-

वीचिक्षोभस्तनितविहग श्रेणिकांचीगुणायाः
संसर्पन्त्याः स्खलितसुभगंदर्शितावर्तनाभेः।
निर्विन्ध्यायाःपथिभवरसाभ्यंतरः संनिपत्य,
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु।।

छान्दोग्योपनिषद् में अन्न की अपेक्षा जल को उत्कृष्ट कहा गया है। महर्षि नारद ने भी कहा है कि पृथ्वी भी मूर्तिमान जल है। अन्तरिक्ष, पर्वत, पशु-पक्षी, देव-मनुष्य, वनस्पति सभी मूर्तिमान जल ही हैं। जल ही ब्रह्म है ।प्रमुख पर्वत देवताओं के निवास स्थान हैं। अगर पर्वत देवताओं के वासस्थान नहीं होते तो खनन के अर्थतंत्र की भेंट चढ़ चुके होते। विन्ध्यगिरि महाशक्तियों का वासस्थल है, कैलाश महाशिव की तपोभूमि है। महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भवम्' में हिमालय की महानता और देवत्व को बताते हुए कहा है- **'अस्तुस्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।'** भगवान श्रीकृष्ण ने गोवर्धन की पूजा का विधान इसलिए शुरू कराया था। क्योंकि गोवर्धन पर्वत पर अनेक औषधियों के पेड़-पौधे थे, मथुरा के गोपालकों के गोधन के भोजन-पानी का इंतजाम उसी पर्वत पर था।

अंत में प्रभु अंतिम/लेकिन सबसे जरूरी बात
वहाँ होंगे मेरे भाई बन्धु/मंगल ग्रह या चाँद पर/
पर यहाँ पृथ्वी पर मैं/यानी आपका मुँह लगा यह पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक/पहुँच चुका हूँ।''

प्रकृति के संरक्षण, परिमार्जन और अग्रसारण का संदेश देते हुए अम्बरीश श्रीवास्तव के दोहे बरबस हमारा ध्यान आकृष्ट करते हैं -

वृक्षों को मत काटिए, वृक्ष धरा श्रृंगार.
हरियाली वसुधा रहे, बहे स्वच्छ जलधार..
नदियाँ सब बेहाल हैं, इन पर दे दें ध्यान.
कचरा निस्तारित करें, बन जाएँ इंसान..
जैविक खेती है भली, धरती हो आबाद.
गोबर को अपनाइए, बचे रसायन खाद..
अदरक गमलों में उगे, उगें टमाटर लाल.
छत पर खेती भी करें, जीवन हो खुशहाल..
इसे आज ही त्यागिये, कभी न होती नष्ट.
पोलिथिन या प्लास्टिक, धरती को दे कष्ट..
कीट नाशकों का जहर, वार करे यह गुप्त.
पशु पक्षी बेहाल हैं, आज हुए कुछ लुप्त..
दूध पिलाते जो हमें, वही बने आहार.
इनसे कैसी दुश्मनी, क्यों होता संहार..

स्पष्ट है कि हिन्दी काव्य-साहित्य में प्रकृति के प्रत्येक उपादान वृक्ष, नदी, फल, फूल, अनाज आदि को पूजनीय बनाया गया है। पदार्थवादी इंसान अपने जीवन-रस को ही लूटने चला है। ऐसी स्थिति में साहित्य-जगत न तो कभी मौन रहा है और न रहेगा। उसकी रचनाधर्मिता मानवता को बचाने के सार्थक प्रयास करती रहेगी। प्रकृति से अलगाव मनुष्य के स्वार्थी होने की निशानी है। कौन स्वयं को स्वार्थी की संज्ञा से विभूषित करना चाहेगा?

गाँव की यादें

जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।
राह देखती होंगी मेरी, सारी गलियाँ गाँव में।।
मुझे सुनाया करती दीदी, बातें कुछ बचपन की।
कुछ-कुछ मुझको याद अभी तक, अपने नटखटपन की।।
अभी याद है उस माली को, रोज छकाया करते थे।
तोड़ बाग से कच्ची अमियाँ, छुप-छुप खाया करते थे।।
बस्ता लेकर पढ़ने जाते, एक पास के गाँव में।
जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।।
बैठ मेड़ पर देखा करता, मैं बैलों का हल।
वर्षा होती फसल डूबती, दिखता जल ही जल।।
चना मटर के होरा कर-कर, बड़े प्रेम से खाते।
खा रसखीर महेरी-मट्ठा, हम भारी इठलाते।।
खेला करते गुल्ली डंडा और कबड्डी गाँव में।
जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।।
भुना चबैना भड़भूजे से, हर कोई था लाता।
गन्ना चूसे कोल्हू पे जा, गरम-गरम गुड़ खाता।।
सकरकन्द, आलू भी भूने, हमने अधियाने में।
आता कितना स्वाद बैठकर बाते बतियाने में।।
भरी दुपहरी ढोला सुनते, इक पीपल की छाँव में।
जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।।
भाभी के संग खेला करते होली डंडे वाली।
हो जाती सब साफ गाँव की, नाली कीचड़ वाली।।
बैठ पंक्ति में खाया करते, हम पत्तल पर दावत।
जब भी मिलते लोग पूछते, लल्लू क्यों ना आवत।।
जी करता पर जा ना पाऊँ, अपने प्यारे गाँव में।
जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।।
कई साल हो गए शहर में, बच्चे दो हमारे।
नौटंकी, ढोला क्या होते, पूछत रहे बिचारे।।
भागम-भागी आपा-धापी, बना यंत्र सा जीवन।
महँगाई ने कमर तोड़ दी, छूमंतर अब यौवन।।
होगा नहीं प्रदूषण अब भी, मेरे प्यारे गाँव में।
जब से आया शहर पड़ी है, जैसे बेड़ी पाँव में।।

राजेश कुमार
सहायक अधीक्षण पुरातत्व रसायनज्ञ
कार्यालय निदेशक (विज्ञान)
भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, देहरादून

श्री कुमार मनीष अरविन्द, झारखण्ड संवर्ग के भा.व.से. अधिकारी हैं जो वर्तमान में वन संरक्षक, मेदिनीनगर, पलामु, झारखण्ड में पदस्थ हैं। उनकी लेखनी पर्यावरण के प्रति उनके प्रेम तथा वन्य जीवन संरक्षण के प्रति उनकी प्रतिबद्धता की परिचायक है। उनकी पुस्तक 'जीवन, वन और धरती माता' लेखक और झारखण्ड वन विभाग की ओर से आम लोगों और स्कूली बच्चों में जागरुकता हेतु एक प्रशंसनीय पहल है जो सभी के लिए निःशुल्क उपलब्ध है। उनकी इसी पुस्तक से कुछ रचनाएं प्रस्तुत हैं :

जंगल : चार प्रश्न

कुमार मनीष अरविन्द, भा.व.से., रांची, मो. 09199218501

1. **क्यों जंगल चुपचाप खड़ा है ?**

फैला दी है अंधेरे ने
चादर धरती पर, अम्बर में
वन्यप्राणि आहार ग्रहण कर
दुबक गये हैं अपने 'घर' में।

आशंकित उद्विग्न छिपे हैं
झाड़ी में, खोहों में पशु-दल।
'होना है कुछ बुरा' जानकर,
चिन्तित, बुझा-बुझा है जंगल।

पतला नाला सहम-सहम बह
चट्टानों के पीछे जाकर
चेहरा ढाँप हताश पड़ा है
क्यों जंगल चुपचाप खड़ा है।

2. **"क्यों जंगल भयभीत खड़ा है?"**

पूरबा ने पूछा पछिया से,
"क्यों बहना! तुम गुमसुम क्यों हो?"
पछिया बोली "सुना नहीं क्या,
फिर घुस आए हैं 'बनियाती'।

"हल्ला बोला है जंगल पर
पुनः चलाएंगे कुल्हाड़ी।
हत्या होगी वृक्षों की फिर
देखो! उनका चयन शुरू है।

"लालच का मारा वह मानव
देख दरख्तों को खुश होकर
अपनी मुट्ठी भींच रहा है।"
सो जंगल भयभीत खड़ा है।

3. **क्यों जंगल स्तब्ध खड़ा है ?**

बाघ, गौर, गज, चीतल, सांभर
छोटे पशु-पक्षी भी सुन्दर
वन की तो ये हैं सुन्दरता
इनसे चमके जैव-विविधता!

इन्हीं जन्तुओं के वध का अब
दृश्य देखता प्रतिदिन जंगल
इन पशुओं के शव गिन-गिनकर
आहें भरता रहता पल-पल।

'क्यों मानव अपने विनाश को
बुला रहा अपनी देहरी पर?'
सचमुच कितना प्रश्न बड़ा है!
सो जंगल स्तब्ध खड़ा है।

4. **क्यों जंगल गमगीन खड़ा है?**

बरगद/पीपल/शीशम/सेमल
बेचैनी से ताक रहे हैं,
'दर्शन की इस जन्म-भूमि' से
काल-कुक्षि में झाँक रहे हैं।

'एक वृक्ष का वध होना है
हत्या सौ मानव शिशुओं की
बिन वन कैसे मनुज बचेगा
कैसे वंश रहेगा बाकी।'

इसी सोच में डूबा जंगल
बिता रहा रोकर पल-प्रतिपल
मन का रंग उड़ा-उखड़ा है
सो जंगल गमगीन खड़ा है।

आओ मिलकर पौध लगायें

कुमार मनीष अरविन्द, भा.व.से., रांची, मो. 09199218501

आओ मिलकर पौध लगायें
वसुन्धरा को हरित बनायें
तुम भी आओ, वह भी आए
मिलजुल कर हम पौध लगायें।

पेड़ से हमको मिलती छाया
पुष्पों ने वायु मकहाया
दिग्दिगन्त में भरे सुवास
स्वच्छ साफ हो पर्यावास।

वृक्ष हमें भोजन हैं देते
ना-ना फल हम उनसे लेते
किन्तु फलों की कीमत उनको
उन्हें काट कर ही हैं देते।

औषध भी देते हैं पेड़
रोगों से करते मुठभेड़
वे कष्टों से देते त्राण
हम, पर, लेते उनके प्राण।

पेड़ हमारे मित्र बड़े हैं
हम सब, किन्तु विचित्र बड़े हैं
हम उनकी ही काटें रोज
जला उन्हें करते वनभोज।

यह तो सचमुच नहीं है न्याय
हम क्योंकर करते अन्याय
सोचो, तुम भी इस पर आज
सोचे मिलकर सकल समाज।

हम सबने प्रण लिया है मिलकर
वृक्ष लगायेंगे अब पिलकर
चप्पा-चप्पा हरा करेंगे
अपना कल सुनहरा करेंगे।

वन महोत्सव का यह काल
लाता है मौका तत्काल
चारों ओर लगाओ पेड़
जागें जब हम, तभी सवेर।

जामुन, महुआ, कटहल, आम
बेल, नीम के पौध तमाम
जो भी हो उपलब्ध, तुरंत
करें शुरू यह कार्य महान।

पौधा रोपें, पौधा सीचें,
पौधे को दुलरायें रोज
उनके प्राणों की रक्षा को
उन्हें देख तो आएँ रोज।

जब वह पौधा वृक्ष बनेगा
तब वह प्यारा मित्र बनेगा
किया करेगा मन की बात
आत्मीयता की बरसात।

हाँ, अब आओ पौध लगायें
वसुन्धरा को हरित बनायें
तुम भी आओ, वह भी आए
मिलजुल कर हम पौध लगायें।

बांस बीज-एक वरदान

योगेश पारधी, वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी
प्रमोद सिंह राजपूत, तकनीकी अधिकारी
उष्ण कटिबंधीय वन अनुसन्धान संस्थान, जबलपुर (म.प्र.) 482021

मानव के जीविकोपार्जन के लिये बांस प्राकृतिक उपहारों में से एक है। यह घास प्रजाति का सदस्य है जो प्राचीन समय से मनुष्य की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति करके उसे प्रकृति के समक्ष संघर्ष के लिए तैयार करता आया है तथा समय के साथ साथ मनुष्य ने इसकी उपयोगिता को बढ़ाया है। मनुष्य बांस का उपयोग घर, वाद्य यंत्र, बाँध बनाने में, सुरक्षा कार्यों में एवं खाद्य पदार्थ के रूप में करता आया है। बांस में फूल व फल काफी समय के बाद आते हैं, प्रजाति के अनुसार इनका समयकाल हर प्रजाति के लिए अलग अलग होता है।

बांस के स्तम्भ व बीज का उपयोग सम्पूर्ण विश्व में खाद्य पदार्थ के रूप में किया जाता है। बांस का उपयोग अलग अलग क्षेत्र में मानव की सांस्कृतिक रहन-सहन जीवन शैली के अनुसार बदलता रहता है।

मध्यप्रदेश के जनजातीय क्षेत्रों जैसे मंडला, डिन्डोरी, बालाघाट, सिवनी, छिंदवाड़ा, शहडोल, अनूपपुर, सीधी, झाबुआ, खण्डवा, खरगौन जिलों में, लगभग 150 से 200 सेमी वर्षा, उपजाऊ मृदा एवं अनुकूल जलवायु दशा होने की वजह से वहां काफी मात्र में बांस के वन है। इन क्षेत्र में बैगा, गोंड, भारिया, कोरकु, कोल, भील आदि आदिवासी जनजातियों का वास है जो बांस के उपयोग के बारे में काफी जानकारी रखते हैं। हालांकि वे बांस बीज के बारे में कम जानकारी रखते है। इसकी मुख्य वजह यह है की बांस में बीज काफी वर्षो लगभग 40-50 वर्षो के बाद में आता है। जब बांस में बीज आता है तो इसे ये लोग खाद्य पदार्थ के रूप में संग्रहित करते है।

बांस के बीजों का संग्रहण

जनजाति परिवार इसे आम बोलचाल की भाषा में बांस बीज कहते है। यह बांस बीज दिखने में गेंहू की तरह हलका पीला-सफेद होता है और गेंहू से पतला होता है। यह आकार में चावल की तरह होता है इसलिए इसे बांस-भात भी कहते हैं। जब बीज परिपक्व हो जाता है तब ये आदिवासी पूरे बांस के क्षेत्र को साफ कर लेते हैं ताकि संग्रहित बीज में कचरा, कंकड़ पत्थर की मात्रा कम से कम हो। बीज को ये बांस के पौधे से तोड़ते नहीं हैं अपितु उनके गिरने का इन्तजार करते हैं। इन गिरे हुए बीजों को एकत्रित करने का समय सुबह व शाम निश्चित रहता है। इस एकत्रीकरण के कार्य में मुख्यत: महिलाएं व बच्चे शामिल होते हैं। जमा किये गये बीजों के ऊपर एक चोल, धान के समान होता है जिसे मूसल की सहायता से निकाला जाता है। इस कार्य को मुख्यत: आदिवासी महिलाएं करती हैं। जब बीज का चोल निकल जाता है तब इसे साफ करके बीज को रख लिया जाता है और फिर प्रयोग किया जाता है।

पुष्पित बांस का भर्रा एवं पुष्पित बांस

बांस बीज का भण्डारण

जनजाति परिवार बांस बीज को इकठ्ठा करने के बाद इसे अच्छे तरीके से सुखाते है एवं इसे लम्बे समय तक सुरक्षित रखने के लिए बांस की बनी टोकरी या मिट्टी की बनी कोठियों में रखा जाता है, जिसके ऊपर गोबर का लेप लगा दिया जाता है ताकि पीड़क व हानिकारक कीट इसे नुकसान न पहुंचा पायें।

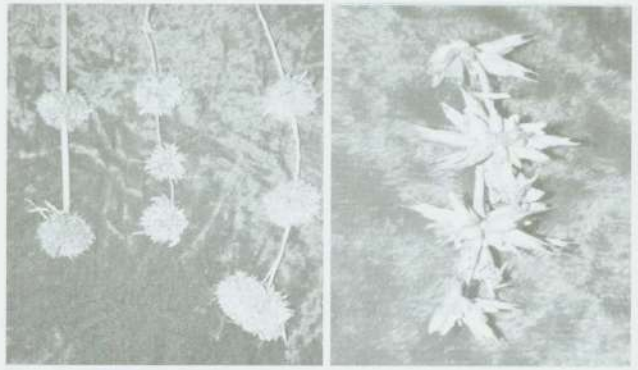

बांस बीज

रोजगार का साधन

ये आदिवासी बांस का बीज अपनी आवश्यकतानुसार रखते हैं। बाकी बचे हुए बीज को ये बाजार में बेच कर अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। वन विभाग भी अपनी अधिकांशत: नर्सरी में नये पौधे तैयार करने के लिए इन्हीं आदिवासी परिवारों पर निर्भर रहता है। ये उन्हें उचित मूल्य देकर बीज प्राप्त करते हैं। इस प्रकार बांस बीज, गरीब आदिवासी परिवार को कुछ आर्थिक सहायता उपलब्ध कराता है।

बांस बीज के उपयोग

1. **खाद्य पदार्थ के रूप में :** बांस बीज को साफ पानी से धोकर चावल की तरह पकाया जाता है। फिर चावल की तरह ही दाल व सब्जी के साथ खाया जाता है। दक्षिण भारत में आदिवासी इसे दही के साथ बड़े चाव के साथ खाते हैं। पूर्वोत्तर भारत में इसे मछली के साथ प्रयोग करते हैं। दूध के साथ मिलाकर इसकी खीर भी बनाई जाती है। गेहूं की तरह इसे पीसकर आटा बनाकर इसकी रोटियां भी बनाई जाती हैं। बांस बीज प्रकृति का अनुपम उपहार है। ये काफी लम्बे समय में प्राप्त होता है। इसकी पौष्टिकता व स्वास्थ्यवर्धकता का गुण इसके महत्व को और भी अधिक बढ़ा देता है। 100 ग्राम बांस बीज से 35-60 ग्राम कार्बोहाइड्रेट और 265.6 किलोग्राम कैलोरी उर्जा प्राप्त होती है। इस प्रकार यह गेंहू व चावल से भी अधिक पौष्टिक होता है।

2. **प्रजनन क्षमता बढ़ाने में:** पूर्वोत्तर भारत व दक्षिण भारत में अधिकांश आदिवासी मानते हैं कि बांस बीज से मनुष्य की प्रजनन क्षमता में वृद्धि होती है। अत: वे प्रजनन क्षमता वर्धक के रूप में इसे भोजन में विशेष रूप से शामिल करते हैं। मिजोरम में लोग संतान प्राप्त करने के लिए इसे दवाई के रूप में प्रयुक्त करते हैं। चूँकि बांस बीज खाने के बाद चूहों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि होती है अत: माना जाता है कि बांस बीज से चूहों की प्रजनन क्षमता में वृद्धि होती है। इसी आधार पर आदिवासी समुदाय भी इसे शक्तिवर्धक के रूप में प्रयोग करता है। हालांकि यह अभी तक सिद्ध नहीं हो पाया है कि वास्तव में बांस बीज चूहों की प्रजनन क्षमता में वृद्धि करता है। इस पर अभी भी शोध कार्य चल रहा है।

3. **वानिकी के लिए सुअवसर:** बालाघाट, मंडला, छिंदवाड़ा, सिवनी, शहडोल आदि जिलों में बांस के जंगल बहुत मात्रा में हैं। यहां के बांस वन सम्पूर्ण मध्यप्रदेश में अपनी उच्च क्वालिटी के लिए जाने जाते हैं तथा बालाघाट व शहडोल के बांस नेपानगर एवं अमलाई पेपर मिल में अखबारी कागज के निर्माण में प्रयुक्त होते हैं। महाकौशल क्षेत्र छत्तीसगढ़ से जुड़ा है। अत: यह माना जा सकता है कि पूर्व समय में महाकौशल क्षेत्र से बांस का बीज छत्तीसगढ़ भेजा जाता था। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि महाकौशल क्षेत्र तथा छत्तीसगढ़ के वनों में लगा हुआ बांस अनुवांशिक रूप से समान है। महाकौशल क्षेत्र में वर्तमान में लगे बांस की सन्तति छत्तीसगढ़ के जंगलों में वर्तमान में विद्यमान है।

बांस में बीज आने के बाद बांस पूर्ण रूप से मृत हो जाता है तथा बीजों से नये पौधों का निर्माण होता है। यह जीवन निर्माण व मृत्यु, जीवन चक्र का एक नियम है जो बांस में भी परिलक्षित होता है। यह प्रकृति की अनूठी प्रक्रिया है जिसे हम बदल नहीं सकते पर इस अवसर का लाभ उठाकर बीजों को एकत्रित कर उनसे नये पौधों का निर्माण करके, नये जीवन सृजन का सन्देश दे सकते हैं।

सार

भारत की विभिन्न जनजातियाँ बांस बीज का प्रयोग भोज्य पदार्थ के रूप में करती हैं। यह इन जनजातियों के लिए गेहूँ व चावल का वैकल्पिक खाद्य स्रोत है जिससे वे आड़े समय में अपनी भूख को शांत करते हैं। इस प्रकार बांस बीज उनके लिए प्रकृति का एक उपहार है जो कठिन संघर्षो में भी जीवित रहने की प्रेरणा देता है। ये जनजातियाँ, बांस बीज के संग्रहण व उपयोग के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग आदिकाल से करती आ रही हैं। ये सिर्फ खाद्य पदार्थ के रूप में ही इसका प्रयोग करते हैं। औषधि के रूप में इसके प्रयोग के कोई ठोस सबूत नहीं हैं न ही कोई वैज्ञानिक प्रमाण हैं। बांस बीज में असाधारण रूप से कार्बोहाइड्रेट व प्रचुर मात्र में ऊर्जा प्रदान करने वाले तत्व मौजूद रहते हैं, जो इसकी उपयोगिता को बढ़ाते हैं। बांस बीज की उपयोगिता को बढ़ाने के लिए इस पर और अधिक अनुसन्धान की आवश्कता है, जो इसमें पाए जाने वाले तत्वों व शरीर में उनकी भूमिका को जान सके जिससे इनका प्रयोग औषधि निर्माण में किया जा सके।

ये रात सुहानी है, ये बात सुहानी है...

ये रात सुहानी है,
ये बात सुहानी है।
जो बीत गई रातें,
वे लौट के ना आनी हैं।
मेरा फूल सा बचपन था,
जो बीत गया पहले।
बचपन में जो किया परिश्रम,
उसका फल जो मिला मुझको,
इस खुशी के स्वागत में,
एक महफिल जमानी है।
ये रात सुहानी है।
ये बात सुहानी है।
अब सारी जिन्दगानी,
हँस- हँस के बितानी है।
ये रात सुहानी है।
ये बात सुहानी है।
माँ के आँचल में हमको,
लगता भूमण्डल प्यारा था।
उसके चेहरे के झलक पाने की,
अब हमने ठानी है।
ये रात सुहानी है।
ये बात सुहानी है।
हम भूल गए वो खुद भूखी,
रह करके हमें खिलाती थी।
हमको सूखा बिस्तर देकर,
खुद गीले में सो जाती थी।
ये बात ना अब, लौट के आनी है।
ये रात सुहानी है।
ये बात सुहानी है।।

सचिन कुमार
स्टेनोग्राफर ग्रेड-2
कार्यालय निदेशक (विज्ञान)
भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, 29-न्यू कैंट रोड,
हाथीबड़कला, देहरादून

“बिस्मिल्लाह”

प्रद्युम्न गौरव, भा.व.से., 2016 सत्र

लेफ्टिनेंट अकमल के लिये आज बहुत बड़ा दिन था। पाँच साल पहले इराक़ के रक्क़ा शहर को आतंकी संगठन ISIS यानि दाएश ने अपने नये इस्लामिक साम्राज्य की राजधानी घोषित कर दिया था। इन पाँच सालों में रक्क़ा और उसके आस-पास के सभी बड़े शहरों जैसे मोसुल और सिंजर पर दाएश ने कब्जा कर लिया था। पर ले. अकमल के लिये सबसे दर्दनाक बात यह थी कि उसके अपने शहर रक्क़ा जहाँ पर उसका जन्म हुआ और जहाँ के खेतों और बंजर मैदानों में दौड़कर उसने मिलिटरी में भरती की तैयारी की वही शहर आज दाएश का गढ़ बन चुका था। पिछले पाँच सालों में उसने दाएश की हैवानियत के कई किस्से सुने थे। शरिया के नाम पर ऐसे कई कानून बना दिये गये थे जिन्होंने इराकियों को कई शताब्दियों पहले जैसी जीवनशैली अपनाने पर मजबूर कर दिया था। और इस कानून का पालन करवाया जाता या बंदूक की नोक पर।

पाँच साल पहले जब इराकी सेना ने दाएश के खिलाफ जंग शुरू की थी तब अकमल एक मामूली सा सिपाही था। पर जैसे-जैसे दाएश की हैवानियत के किस्से उसे रक्क़ा में रहने वाले अपने रिश्तेदारों और दोस्तों से चिट्ठी या फ़ोन पर मिलते जाते वो दूसरे मोर्चे पर तुर्किश आतंकियों से लड़ते हुए अपने आप को असहाय महसूस करता । हर चिट्ठी और फोन दाएश की बर्बरता और जाहिलियत का नया बयान लाता और अकमल का खून खौला देता। पर ये सारा गुस्सा और दाएश के खिलाफ अपने दिल में भरी नफरत को अकमल ने जंग में बखूबी इस्तेमाल किया। कई मर्तबा अकमल ने अकेले की दुश्मन की नाकाबंदी के भीतर जाकर उधर तबाही का जो मंजर बनाया उसे देखकर दुश्मन भी अकमल को नाम से जानने लगे। कई बार उसे लगता कि दाएश को अपना मसीहा मानने वाले इन तुर्किश पिल्लों को छोड़कर सीधे रक्क़ा जा कर ही क्यों न दाएश के खिलाफ लड़े। पर इराकी मिलिटरी अभी दाएश पर सीधे हमले के लिये तैयार न थी।

आज पाँच साल बाद वो दिन आया है जब दाएश का इराक से लगभग खात्मा हो चुका है। ले० अकमल का इराकी सेना में बड़ा नाम है। अपनी दिलेरी और बहादुरी के कारण इराक के हर सिपाही की जुबान पर उसका नाम है। आज रक्क़ा पर आखिरी हमला होना है। और रक्क़ा को अच्छी तरह से जानने वाला ले० अकमल से बढ़कर और कौन हो सकता है। इसलिए सेना ने ले० अकमल को इस मिशन का इंचार्ज बनाया है। कल रात से ही ले० अकमल के आदेश पर सेना की तोपें रक्क़ा पर लगातार बमबारी कर रही हैं। छह घण्टे की लगातार गोलाबारी और बमबारी से दाएश की ताकत कमजोर हो गयी है। सुबह के चार बजने में कुछ ही मिनट शेष हैं और रक्क़ा में सबसे पहले घुस कर आक्रमण करने वाली पैदल टुकड़ी का नेतृत्व ले० अकमल खुद कर रहा है। आज वो अपने रिश्तेदारों और दोस्तों पर किये गये हर जुल्म का हिसाब चुकता करने जा रहा है। सालों से पनप रही उस आग को बुझाने जा रहा है जिसने उसके प्यारे शान्त और खूबसूरत शहर रक्क़ा को तबाह कर दिया।

एक क्षण में ही उसे रक्क़ा में बिताये अपने वो खुशनुमा दिन याद आ गये। कैसे वो बाजारों में घूमकर दोस्तों के साथ मस्ती किया करता है। कैसे एक बार महमूदुल्लाह को खजूर चुराकर खाने पर दुकानदार ने पकड़ लिया था और उसने बड़ी मुश्किल से उसके चंगुल से उसे छुड़ाया था। कैसे उसने पैसे जोड़-जोड़ कर ईद पर लुबना के लिये एक मखमली दुपट्टा खरीदा था जो गलती से उसके अब्बू को मिल गया था।

उसे याद था जब उसके बाबा जो मस्जिद के इमाम थे सब काम खत्म कर मस्जिद की चौखट पर बैठ बिस्मिल्लाह पढ़ते थे। उसके पूछने पर उन्होंने बताया था कि आज दिन भर में खुदा ने जो करम किया है उसका शुक्रिया अदा करने के लिये ही वो बिस्मिल्लाह पढ़ते हैं। कैसे उसने खजूर वाले से महमूदुल्लाह को बचाने के लिये उस रात बिस्मिल्लाह पढ़ा था। एक-एक कर ये सारी यादें टप-टप कर आँसू बन गिरने लगीं।

पहली ब्रिगेड को शहर में घुसे हुए तीन घण्टे हो चुके हैं। दाएश के आतंकी रात की गोलाबारी में या तो मारे गये थे या रक्क़ा छोड़कर भाग चुके थे। जो बचे खुचे थे उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया था। गोलाबारी इतनी भयानक थी कि शहर की शायद ही कोई दीवार ऐसी हो जिस पर असर न पड़ा हो। बिल्डिंगों में बड़ी-बड़ी दरारें पड़ गयी थीं। कई जगह साबुत तोप के गोलो ने बड़े छेद कर दिये थे। बाज़ार में सिर्फ तबाही का मंजर था। इतनी भारी गोलाबारी ने सेना का काम आसान तो कर दिया था पर इसकी बहुत भारी कीमत रक्क़ा शहर ने उठाई थी। अकमल के सपनों का शहर अब सिर्फ खण्डहरों का शहर रह गया था। पर जीत की खुशी में ये सारी बातें भुला दी गयीं। हर आँख आज ले० अकमल को ढूँढ रही थी जिसके नेतृत्व में इराकी सेना ने दाएश को उसके आखिरी ठिकाने से भी खदेड़ बाहर किया था। अब उसका कर्नल बनना पक्का था। रक्क़ा शहर के इतिहास में अकमल का नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा। ये टूटी सड़कें और खण्डहर इमारतें जब फिर से बनेंगी तब इनका नाम कर्नल अकमल के नाम पर रखा जायेगा। ये किसी को याद नहीं होगा कि इन्हें तोड़ा और गिराया भी उन्हीं के आदेश पर गया था। पर अकमल का काई नामोनिशान नहीं था। हर तरफ यही शोर था कि ले० अकमल कहाँ है ?

बाज़ार के छोर पर एक टूटी हुई मस्जिद पर सूरज की पहली किरण पड़ रही है। रात का भयावह मंजर अब सूरज की रोशनी में विदित हो रहा है।

मस्जिद की चौखट पर एक गठीला नौजवान फौजी वर्दी में सर झुकाये बैठा है। उसके होंठ काँप रहे हैं और आँखों से टप-टप कर आँसू गिर रहे हैं। वो कुछ कहना चाह रहा है पर होंठों से बुदबुदाने के अलावा कोई आवाज़ नहीं निकल रही है। अपनी पूरी ताकत लगाकर वो एक आखिरी प्रयास करता है और इसी शब्द के साथ फूट-फूट कर रो पड़ता है।

मस्जिद की खण्डहरनुमा दीवारों के बीच “बिस्मिल्लाह” गूँज रहा है।

प्रकृति

कितनी अद्भुत है ये प्रकृति
कितना शुभ्र हिमालय
कितना भव्य यह नजारा
कितने प्यारे हैं ये फूल
कितनी मासूम हैं ये कलियां।
कितना रम्य है ये दर्रा
कितनी प्यारी-प्यारी नदियां
कितना मीठा-मीठा जल
कितना सुन्दर है आकाश
कितना स्वर्णिम है ये रवि
और झिलमिल चांद सितारे।
कितने घने हैं ये वृक्ष
कितनी शीतल इनकी छाया
कितना मोहक है ये झरना
कितने चंचल हैं ये पक्षी
कितना मधुर इनका कलरव।
कितने प्रिय हैं ये वन
कितने प्यारे उपवन
कितनी मधुर है बयार
कितनी महान है ये धरती
कितना बड़ा इसका आंचल।
धन्य है ये प्रकृति
जिसमें बेशुमार दौलतें
ऊँच-नीच, जात-पांत
का दूर-दूर तक भाव नहीं
बाँटती हैं दौलतें सभी में सम भाव से
सभी में समभाव से।

मंजुला शर्मा
वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक
महासर्वेक्षक कार्यालय, देहरादून

हिमराज और शशांक

डॉ० अंकुर अवधिया, भा.व.से. 2014, म.प्र. संवर्ग

इन नयनों ने निहारा है
विशाल हिमराज को,
श्वेत शशांक को,
और इन दोनों के
मिलाप से बने
एक अद्‌भुत संगम को।

यह वही हिमराज है,
जिसकी रत्न-जड़ित चोटियाँ
देश की सरताज हैं।
जिसकी प्रस्तर शिलाओं ने
सदियों से ही शत्रुओं,
और उनके मनोबल को
छिन्न-भिन्न किया है।
यह वही द्वारपाल है,
जिसने हमारी अस्मिता की
हमेशा रक्षा की है;
और जिसके हिम-शिखरों पर
न जाने कितनी शत्रु-अस्थियाँ
वर्षों से निद्रायमान हैं।
आज इसके निकट जाने से भी
मनुज-हृदय घबरा जाता है!

और आज मैंने देखा है
इन्हीं बर्फीली चोटियों को
शशिकी ज्योत्स्ना में नहाए हुए।
आज वही शिखर
कितने मृदुल लग रहे हैं!
आज वे मेघ-घटाओं में
वैसे ही मुखड़े छुपा रहे हैं
जैसे कभी मैंने बचपन में
आँख-मिचौली खेली थी।
आज वही दुष्कर चोटियाँ
कितनी रमणीय लग रही हैं!
और आज मेरे दिल में
रह-रहकर यही उद्‌गार उठ रहा है
कि इस दुर्लभ दृश्य को
हमेशा आँखों में बसा रखूँ।

कितना अच्छा होता,
जो वक्त यहीं ठहर जाता!
अगर इस जहाँ में
सिर्फ दो ही वस्तुएँ होतीं-
एक मैं, और दूसरी,
ये चाँदनी में नहाई सतहें-
तब कितना अच्छा होता!
और मैं इन्हें हमेशा
अपलक निहारता रहता!
इस वातावरण में
जो शीतलता है,
जो ममत्व है,
और जो शांति है,
वह शायद स्वर्ग में भी
ना जाने मिले ना मिले!

पर फिर मुझे
याद आती हैं
कुछ जिम्मेदारियाँ;
मेरे लोग,
मेरी धरती,
और इनके प्रति
बाकी बचे मेरे कुछ कर्तव्य।
एक ओर मुझे
मेरे कर्म खींच रहे हैं।
और दूसरी ओर,
यह मोहक परिदृश्य!
एक ओर है
कर्तव्यहीन होने का अभिशाप।
और दूसरी ओर है
इस वियोग का विलाप!

मैं कुछ देर
इसी दुविधा से
पीड़ित रहता हूँ।
कराहता हूँ।
खुद को कोसता हूँ।
और अपनी छटपटाहट में
कुछ बूँदें टपकाता हूँ।
आज मुझे एक निश्चय
करना ही है!
पर जैसे किसी माँ के
दोनों ही पुत्र समान होते हैं;
वैसे ही आज मेरे लिए
ये दोनों ही रास्ते
बिलकुल हमसर हैं।
और मैं? किंकर्त्तव्यविमूढ़!

तब फिर मैं,
कुछ निश्चय करता हूँ।
अपने मन को
कठोर करता हूँ।
और अपनी राह पर
निकल पड़ता हूँ।

रेस्क्यू

डॉ० अंकुर अवधिया, भा.व.से. 2014, म.प्र. संवर्ग

उससे मेरी पहली मुलाकात कल सुबह नाश्ते के समय हुई थी। देहरादून में जाड़े का मौसम चल रहा है। यहाँ की ठंड का तो वैसे ही कोई जवाब नहीं है, पर अगर सुबह की बात की जाए तो ठिठुरन और भी कई गुना हो जाती है। गर्मा-गरम रजाई से सुबह-सुबह क्लास के लिए निकलना सच में किसी सजा से कम नहीं होता! मैंने अब तक शायद सात बार अपने अलार्म को स्नूज कर लिया था, और आठवीं बार करने ही वाली थी कि मम्मी का फोन आ गया। डाँट सुनने के साथ उठी और भागम-भाग में लग गई। शायद सर्दियों का मेरा यही रुटीन बन चुका था।

तैयार होकर नाश्ते के लिए निकली तो देखा कि इन सर्र-सर्र की हवाओं के बाद भी गार्डन में काफी गहमा-गहमी थी। जहाँ सन्नाटा देखने की आदत थी, वहाँ आज कई लोग एक गोल घेरा-सा बनाकर खड़े दिखे। काफी खुश लग रहे थे वे सभी। कुछ झुक-झुककर सेल्फी ले रहे थे, तो कुछ उछल-उछलकर अजीब-अजीब सी आवाजें निकाल रहे थे। मैंने अटेंडेंट को गार्डन की तरफ इशारा किया तो उसने कहा: "मैडम, ये सब यहाँ रिसर्चर्स हैं। इन्हें एक जानवर बीमार लगा, सो इन्होंने उसे रेस्क्यू करने के लिए कल एक पिंजरा लगाया था। उसमें आज वह बिज्जू फँस गया, इसीलिए इतनी खुशी से नाच रहे हैं।"

बिज्जू। नाम तो सुना था, पर कभी देखा नहीं था। कैसा दिखता है यह जानवर? कौतुहलता तो बहुत थी, पर घड़ी की सुई टिक-टिककर मुझे क्लास भेजने को काफी आतुर भी थी। मेस जाते हुए सिर्फ एक झलक ही देख पाई। एक बड़े नेवले जैसा लगा वो। ऊपर से सफेद, नीचे से काला। और बड़ी-बड़ी, गोल-गोल आँखों वाला। मुझे लगा, जैसे वह मुझे बुला रहा हो। पर मैंने भागते हुए उसे "टा-टा" में हाथ हिलाया और निकल चली। यही हमारी पहली मुलाकात थी।

लंच तक तो मैं उसे भूल ही चुकी थी। पर वापस आई तो पिंजरा वहीं रखा था। और पिंजरे में वही बिज्जू! अब उस पर दोपहर की कड़ी धूप पड़ रही थी। पिंजरे में कुछ कटे हुए फल पड़े थे- भूरे-भूरे सेब, काले-काले पनियाए केले और नारंगी-नारंगी संतरे। और बिज्जू उन्हें ही खा रहा था। मैं पास गई तो खाते से अचानक रुक गया और मुझे ताकने लगा। जैसे कह रहा हो, अब तुम भी आ गए मुझे देखने! देख लो, जो कुछ देखना चाहते हो! मैंने ध्यान से देखा, वह तो वाकई ईश्वर की एक सुंदर रचना था! काली-काली चमकीली आँखों, और पूरा शरीर नर्म-नर्म बालों से ढँका हुआ। उसकी मोटी-मोटी पूँछ तो मेरे पापा के शेविंग-ब्रश से भी ज्यादा मोटी थी। मुझे निहारता देख अब वो कलाबाजियाँ करने लगा। कभी पिंजरे की दीवारों पर खड़ा हो जाता, तो कभी छत पर। मुझे अचानक लगा, इतनी उछल-कूद करता खाता-पीता जानवर बीमार कैसे हो सकता है? हमें तो पढ़ाया गया था कि बीमार जानवर की पहचान ही यही होती है कि वह खाना-पीना छोड़कर थका, निष्क्रिय-सा नजर आने लगता है। पर दूसरे ही क्षण लगा कि यहाँ के शोधकर्ताओं को तो मुझसे ज्यादा ही पता होगा। वे उसका भला चाहते हैं, इसीलिए तो उन्होंने उसे रेस्क्यू करने की यह कवायद की है। यही सोचकर मैंने अपने आपको

निश्चिंत किया। फिर से उसे "टा-टा" कर मैं अपने काम में निकल चली। यही हमारी दूसरी मुलाकात थी।

क्लास से वापस आई तो देखा कि एक रिसर्चर उस पर पाईप से पानी डाल रही थी, और साथ ही अपने मोबाईल पर विडियो भी बना रही थी। बिज्जू बार-बार अपने शरीर को झटक-झटककर पानी की बूँदें सब तरफ उड़ा रहा था। पर वह लड़की और भी हँस-हँसकर खुश हो रही थी। मुझे कुछ बुरा लगा। पर फिर सोचा, शायद यह ठंड में रहने वाला जीव हो। मैंने तो इसे आज ही देखा है, पर शायद यह रिसर्चर इसके बारे में बरसों से जानती हो। हो सकता है कि बीमार जानवर को ऐसे ही रेस्क्यू किया जाता है। इसलिए कुछ न बोलकर मैं अपने कमरे में चली गई।

चौथी बार उसे रात में मैंने देखा। मैं खाने के बाद ईवनिंग वॉक पर निकली थी। तेज और सर्द हवाओं की रात में दो स्वेटर और जाकिट के बावजूद मैं लगभग काँप रही थी। अचानक मन में आया, उस बिज्जू का क्या हाल होगा? देखा तो पिंजरे के ऊपर एक फटी-सी बोरी ढँकी थी। शायद ओस से भीगकर स्याह हो गई थी। बिज्जू तो नहीं दिखा, पर उसकी वे काली-काली आँखें जरूर दिखाई दीं। मैंने अटेंडेंट से इशारा कर पूछा, "इसे ठंड नहीं लग रही होगी? कुछ और गर्म जगह पर इसे क्यों नहीं रखते?" तो उसने बताया, "नहीं मैडम, कहीं छू भी लिया तो रिसर्चर बोलेंगे कि तुमने हमारा सारा काम ही बिगाड़ दिया! पूरा ठीकरा मेरे सर ही फोड़ देंगे। तो जितना रिसर्चर मैडम कहेंगी, हम सिर्फ उतना ही करेंगे! ना बाबा, आप भी इससे दूर ही रहिये। मैडम बता रही थीं, यह एक बीमार जानवर है। कहीं आप भी बीमार पड़ गये तो? फिर भगवान ने जब इस जीव को बनाया है, तो वो ही इसका ख्याल भी रख लेंगे।" मैंने भी सोचा, कई जानवर सर्द रातों में बाहर तो रहते ही हैं। फिर जिस रिसर्चर ने इसे पकड़ा है, वह तो यह जानती ही होगी कि इसे कैसे रखना है। घूम-फिरकर रूम पर आई और एक किताब पढ़ते हुए सो गई।

आज रविवार है। छुट्टी का दिन। मैंने भी सोने की अपनी कमी आज पूरी कर ही ली। ग्यारह बजे बाहर देखा तो पिंजरे पर बोरी नहीं थी। खा-पीकर सोचा, आज तो बिज्जू को अच्छे से देखूँगी। फुरसत से। और काफी सारी तस्वीरें भी लूँगी। वैसे भी हट्टा-कट्टा उछलता कूदता जानवर बीमार कैसे हो सकता है? ना-ना, शायद शोधकर्ताओं को कोई गलतफहमी रही होगी। मैं तो आज खूब सारे फोटो लूँगी। कैमरा लेकर निकली तो अटेंडेंट ने दूर से कहा, "मैडम, ध्यान से! एक कपड़ा रख लीजिए नाक पर! वह बिज्जू तो रात में ही मर गया। उसकी बॉडी बदबू मार रही है।"

बिज्जू रात में ही मर गया!

सचमुच?

कैसे?

कल ही तो वह अच्छा भला कूद रहा था! फिर रात में कैसे मर गया?

पिंजरा अब भी धूप में ही था। पास गई तो सचमुच काफी बदबू थी। उसका चमचमाता शरीर अकड़ा हुआ उल्टा पड़ा था। पैरों में नाखून घिसे-हुए से लग रहे थे। और मुँह पर नए जख्मों के निशान साफ दिख रहे थे। जैसे उसने कैद से निकलने की भरसक कोशिश की हो। दाँतों से और नखों से काफी देर तक लोहे की सलाखों से जूझता रहा होगा बेचारा। पर लोहे के आगे इस छोटे से जानवर की क्या बिसात हो सकती थी? अंत में जीत तो पिंजरे की ही होनी थी। सो वही हुआ।

अरण्य

अब तक अटेंडेंट भी पास आकर खड़ा हो गया था। बोला, "मैडम, बहुत बुरा हुआ इसके साथ। कल शाम से ही हालत ठीक नहीं लग रही थी। कोई धूप के बाद कभी पानी से नहलाता है? और वह भी जब आप जानवर को बीमार बताकर पकड़ रहे हो! शायद बुखार चढ़ गया था। रात होते तक एकदम ही शाँत पड़ गया था। मैंने कई बार रिसर्चर मैडम को फोन किया कि आकर इसे देख जाएँ। पर वे बोलीं कि कोई पिक्चर देखने गई हैं। वीकएंड मना रही हैं। देर रात ही लौटेंगी। अभी बिजी हैं। बार-बार रिक्वेस्ट करने पर मुझसे बोलीं कि छूकर बताओ, कितना गर्म लग रहा है? बताइये मैडम, वे तो हमेशा दस्ताने पहनकर पास आती हैं, और मुझसे कहती हैं कि नंगे हाथ से ही छू लो। हमें दस्तानों की जरूरत नहीं होती क्या? क्या हमारी जान की बिलकुल भी कीमत नहीं है? फिर भी इस बेचारे की खातिर मैंने हाथ लगाकर छुआ। मुझे तो यह बहुत गर्म लगा। तपता हुआ। फिर मैडम को फोन किया तो कहा कि कोई बोरी ढँक दो। आप ही बताइये मैडम, रात में बोरी भला कहाँ मिलती है? वे सुबह इंतजाम करके नहीं जा सकती थीं क्या? क्या इनका काम सिर्फ बेजुबान जानवर को पकड़कर फोटो खींचना है? खैर मैंने मैस से बोरी लेकर ढँक दी और मैडम को फिर फोन किया कि रात में जब आएँ तो एक बार जरूर देख जाएँ। तो बोलने लगीं कि खबरदार, मुझे डिस्टर्ब मत करो। और फिर फोन ही काट दिया!"

अटेंडेंट अब तक लगभग रुआँसा हो गया था। शायद उसके स्वाभिमान को काफी चोट पहुँची थी। बोला, "और आज सुबह देखा तो इसका शरीर पूरा ठंडा पड़ चुका था। सुबह से तीन बार रिसर्चर मैडम के कमरे पर जा चुका हूँ कि बदबू फैल रही है, प्लीज आकर बताइये कि क्या करें! हर बार "आ रहे हैं" कहकर वापस भेज दिया। आप ही बताइये मैडम, ये कैसी रेस्क्यू है? कि अच्छे-भले जानवर को पकड़ो, फोटो खींचो, और फिर मार डालो? और अगर इतना ही रेस्क्यू करने का शौक है तो क्या अब ये मैडम यह भी जानना नहीं चाहतीं कि मौत का कारण क्या था?'

अब ऐसे तो नहीं रहा जा सकता था। मैंने खुद उन 'रिसर्चर मैडम' को फोन किया। सिचुएशन बताई। उन्होंने बड़ी बेशर्मी से कहा कि अब मरे हुए जानवर को रेस्क्यू तो नहीं किया जा सकता, तो अब उनका क्या काम! जो हुआ सो हुआ। अब तो मैं ही अटेंडेंट से कहकर बॉडी फिंकवा दूँ।

हमारे पास ही अब क्या चारा बचा था? पूरे हॉस्टल में बदबू फैल रही थी। अटेंडेंट मैस से कुछ और लोगों को बुला लाया। फिर "राम नाम सत्य है" कहते हुए लाश को एक गड्ढे में गाड़ आया।

जहाँ पिंजरा रखा था, वहाँ भी काफी बदबू थी। मैंने उस जगह को फिनाईल से साफ करवाया। लोगों ने कहा कि पिंजरे को वापस दे आते हैं। मैंने साफ मना कर दिया। अगर उस रिसर्चर में कोई तमीज, कोई मानवता नहीं है तो उसके साथ असहयोग ही होना चाहिए। ऐसे लोगों का काम फैसिलिटेट करने में कोई तुक नहीं है।

करीब दस दिन तक पिंजरा वहीं पड़ा रहा। उसे देखकर मुझे रोज ही उस नन्हे से जानवर की याद आती रही। और रोज उस रिसर्चर पर गुस्सा और खुद पर ग्लानि आती रही कि क्यों मैंने ही उसे पिंजरे से बाहर नहीं निकाल दिया। फिर एक दिन पिंजरा नहीं दिखा। अटेंडेंट से पता चला कि इंस्टीट्यूट से कुछ लोग आये थे। पिंजरा ले गए। शायद कहीं किसी जानवर को पकड़ना था! रेस्क्यू जो होनी थी!

मकड़ी का मनोवैज्ञानिक सच

डॉ. राजेश कुमार मिश्रा, संगणक एवं सूचना प्रौद्योगिकी अनुभाग,
उष्ण कटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

वैसे तो सभी जानते हैं कि घर की साफ-सफाई करने से स्वास्थ्य संबंधी लाभ प्राप्त होते हैं लेकिन साफ-सफाई का संबंध धर्म और देवी-देवताओं से भी है। जिस घर में स्वच्छता रहती है वहीं देवी-देवताओं का वास होता है। आमतौर पर घर के निचले हिस्सों की तो सफाई हो जाती है लेकिन छत या ऊपरी हिस्सों की ठीक से सफाई नहीं हो पाती। ऐसे में वहां मकड़ी द्वारा जाले बना लिए जाते हैं । घर में ये जाले होना अशुभ माना जाता है ।

अक्सर वृद्धजन और विद्वान लोग कहते हैं कि घर में मकड़ी के जाले नहीं होने चाहिएँ। ये अशुभ होते हैं। ये अंधविश्वास नहीं है बल्कि इसके पीछे वैज्ञानिक और धार्मिक कारण मौजूद हैं। मकड़ी के जालों की संरचना कुछ ऐसी होती है कि उसमें नकारात्मक ऊर्जा एकत्रित हो जाती है। इसलिए घर के जिस भी कोने में मकड़ी के जाले होते हैं, वह कोना या हिस्सा नकारात्मक ऊर्जा से भर जाता है । इस कारण घर में कलह, बीमारियां व अन्य कई समस्याएं पैदा हो जाती हैं ।

साथ ही मकड़ी के एक जाले में असंख्य सूक्ष्मजीव रहते हैं जो कि हमारे स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाते हैं। इसलिए कहा जाता है कि अगर घर में मकड़ी के जाले होते हैं तो घर की सुख-समृद्धि का नाश होने लगता है क्योंकि नकारात्मक ऊर्जा के कारण घर का माहौल इतना अशांत हो जाता है कि व्यक्ति चाहकर भी अपने काम को मन लगाकर नहीं कर पाता है। इसलिए मकड़ी के जालों को अशुभ माना जाता है।

बड़े बड़े जांबाज भी कई बार मकड़ी जैसे छोटे कीड़े मकोड़ों से डर जाते हैं । इस आठ पैरों वाले जीव से क्यों डर महसूस होता है इसे लेकर काफी अनुसंधान हुआ है। जर्मन मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि डर के पीछे किसी चीज को

लेकर लोगों के नजरिए का बहुत बड़ा हाथ होता है। मकड़ी से डरने वाले लोगों की नजर आम तौर पर इस तरह के दूसरे जानवरों पर भी अन्य लोगों से पहले पड़ती है। जर्मनी की मनहाइम यूनिवर्सिटी के मनोवैज्ञानिक आंत्ये गेर्डेस और ग्योग्र आल्पर्स कहते हैं कि जो लोग डरते हैं उनकी कल्पना में ये जानवर ज्यादा देर तक दिखाई देते हैं। आल्पर्स ने बताया, "हमारे शोध के अनुसार डर से पैदा हुई उत्तेजना ही यह तय करती है कि मस्तिष्क नजर के सामने आने वाली चीज को कैसे देखता है। लोगों में एक दूसरे से भिन्नता होने के कारण वे अपने आस पास के माहौल को अलग अलग तरह देखते हैं। इसीलिए जब मकड़ी से डरने वाले लोग यह बताते हैं कि उनकी तरफ बढ़ रही आठ पैरों वाली मकड़ी उन्हें कैसी दिखती है, तो इसे झूठ या बढ़ा चढ़ा कर दिया गया बयान नहीं समझना चाहिए।"

मनोवैज्ञानिकों ने एक व्यक्ति पर दो तस्वीरों वाला प्रयोग किया। जिस व्यक्ति पर प्रयोग किया जा रहा था मनोवैज्ञानिकों ने उसे दो तस्वीरें दिखाई। यह कुछ इस तरह से किया गया कि बाई तस्वीर केवल बाई आंख को और दाई तस्वीर केवल दाई आंख को ही दिखे। आल्पर्स ने बताया दोनों तस्वीरों को लगातार एक साथ देखना संभव नहीं है। दोनों आंखें एक दूसरे से मुकाबला कर रही हैं और दिमाग इन दोनों में से किसी एक को चुन लेता है। दिमाग के इस चयन में हमारे अपने फैसले का हाथ नहीं होता। इन दो तस्वीरों में एक गहरे और हल्के त्रिभुजों के आकार की थी, दूसरी तस्वीर में या तो फूल दिखाया गया या मकड़ी। आठ सेकंड बाद तस्वीर बदल दी गई। बटन दबाने पर प्रयोग करवा रहे व्यक्ति को बताना होता है कि उसने क्या देखा। त्रिभुजों का नमूना या मकड़ी। वैज्ञानिकों ने वह समय भी आंकलित किया, जिसमें व्यक्ति तस्वीर देखता है। डरने वाले लोगों ने सामान्य लोगों के मुकाबले मकड़ी की तस्वीर पर लगभग दोगुनी बार गौर किया । हर बार उन्होंने औसतन चार सेकंड के लिए देखा जबकि दूसरे लोगों ने सिर्फ दो सेकंड के ही लिए देखा। क्या ऐसा भी संभव है कि इन लोगों ने देखा तो दोनों तस्वीरों का मिश्रण, लेकिन बताते समय कहा कि उन्होंने सिर्फ मकड़ी देखी? वैज्ञानिक इस बात से सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि उन्होंने सच्चाई पता करने के लिए नियंत्रण प्रयोग भी किया और पाया कि अगर डरने वाला कोई व्यक्ति कह रहा है कि उसने मकड़ी देखी, तो वह वही बता रहा है, जो उसने देखा।

इसके बाद प्रश्न यह उठता है कि ऐसा भी तो हो सकता है कि प्रयोग में शामिल व्यक्ति ने जानबूझ कर ही मकड़ी देखी। गेर्डेस और आल्पर्स इस बात को भी नहीं मानते हैं। उन्होंने कहा, यह संभव नहीं है कि मकड़ी से डरने वाला कोई इंसान जानबूझ कर देर तक मकड़ी का सामना करे। उन्होंने बताया जब मस्तिष्क यह तय करता है कि उसे क्या देखना है, उस समय भावनाओं, खास कर डर का, इस चयन में अहम किरदार होता है ।

व्याकुल प्रवृत्ति के लोग कई बार अपने भय के कारण को समझने में असमर्थ हो सकते हैं। वैज्ञानिकों का अनुमान है कि इसके लिए उनके मस्तिष्क में फैला तंत्रिका तंत्र जिम्मेदार हो सकता है ।

मानव मस्तिष्क सबसे जटिल अंगों में शामिल है, जहां अरबों तंत्रिकाएं एक साथ काम करती हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि हो सकता है कि डर का भाव पैदा करने वाला मस्तिष्क का हिस्सा सीधे तौर पर दिमाग के उस हिस्से से जुड़ा हो, जहां किसी चीज को देखने के बाद मस्तिष्क उसका प्रक्रमण (प्रोसेसिंग) करता है, ताकि शरीर इसका अनुभव कर सके । इस हिस्से को विजुअल कॉर्टिक्स कहते हैं। अगर आंख के सामने कोई ऐसी चीज आती है जिससे डर लगे, यह तंत्रिकाओं का तंत्र विजुअल कॉर्टिक्स को सावधान कर देता है। अर्थात् मानव आंख इसे चूक नहीं सकती। हालांकि तंत्रिकाओं के इस संबंध के बारे में बहुत कुछ पता करना अभी बाकी है ।

चतुरता और कुशलता ही यदि बड़प्पन का पैमाना हो तो फिर इस क्षेत्र में मनुष्य को नहीं, प्रतियोगिता में मकड़ी को प्रथम पुरस्कार मिलेगा। मनुष्य को अनेक संभावनाओं से जुड़ा मस्तिष्क मिला है, उसकी शारीरिक मानसिक क्षमतायें अद्‌भुत हैं, पर मात्र इतनी ही उपलब्धियों के बलबूते उसे सृष्टि का मुकुट मणि नहीं कहा जा सकता है । शरीरों के प्रकार की तुलना को यदि ध्यान में रखा जाय तो प्रकृति प्रदत्त अनुदान के अनुपात में मकड़ी को कहीं अधिक भाग्यशाली माना जायेगा। छोटे से आकार की मकड़ी कितनी अनोखी क्षमताओं से भरी पूरी है इसको गहराई से देखा जाय तो दाँतों तले उँगली दबा कर रह जाना पड़ेगा। इतने छोटे जीव में इतनी अद्‌भुत विशेषतायें? इसी अनुपात से यदि मनुष्य को मिला होता तो वह अबकी अपेक्षा न जाने क्या-क्या कर गुजरता और न जाने अपने को क्या-क्या कहता, समझता ।

मकड़ी के इच्छित यातायात में नदी नाले भी बाधा नहीं पहुँचाते। जब उसे नदी पार जाना होता है तो किसी ऊँचे पेड़ पर चढ़कर अनुकूल हवा की प्रतीक्षा में बैठी रहती है। हवा का रुख ठीक होते ही वह वहां से तैरती हुई अपने मुँह से

निकलने वाले जाले के सहारे नदी पार के किसी पेड़ आदि पर जा पहुँचती है। उसका पुल सदियों काम देता रहता है और मजे में इधर से उधर आती जाती रहती है। जलाशयों में पानी के भीतर जाला बुनने वाली जलचर मकड़ी थलचर भी होती है बिन पंखों के उसे नभचर होने का भी अवसर मिल जाता है। इस प्रकार यूरेशियन जाति की मकड़ी जलचर, थलचर और नभचर तीनों वर्गों में अपनी गणना करती है ।

मकड़ी का जाला देखने में तुच्छ वस्तु प्रतीत होता है पर उस पर बारीकी से ध्यान दिया जाय तो प्रतीत होगा कि यह अद्भुत प्रकार की वस्तु है। इस जाले के ऐसे तन्तु भी मिल सकते हैं जो फौलाद से भी ज्यादा मजबूत हों। इन धागों की पृथ्वी को लपेट सकने लायक लंबाई का वजन 400 ग्राम से भी कम होगा। दृष्टि तथा प्रकाश संबंधी ऑप्टिकल सूक्ष्म यंत्रों के क्रासवायर इन्हीं तन्तुओं से तैयार किये जाते हैं। अठारहवीं सदी में एक धुन के धनी ने मकड़ी के जाले से ही हाथ के दस्ताने और पैर के मौजे बनाये थे ।

मकड़ी के रक्त में एक विशेष रासायनिक पदार्थ होता है एमीनो एसिड। यह तन्तु उत्पादक ग्रन्थियों में जाकर एक चिपचिपे गाढ़े द्रव के रूप में परिणत हो जाता है। इन ग्रन्थियों के सिरे पर चार छोटे-छोटे छिद्र होते हैं जिन्हें स्पिनेकेट कहते हैं इनके भीतर द्रव को धागे के रूप में निकालने और कातने वाले वलयनल लगे होते हैं। किसी मकड़ी में यह वलयनल 600 की संख्या तक पाये जाते हैं। बुनने के काम आने वाली रसायन लुगदी को रसायन विज्ञान की भाषा में पॉलिमार कहा जाता है।

मकड़ी गुरुत्वाकर्षण के नियम के विरुद्ध ऊपर से नीचे ही नहीं, नीचे से ऊपर को भी चल उछल सकती है। बिना धागे की सहायता के भी उसकी यह ऊर्ध्वगामी क्रिया होती है। पूछ की तरह ताना पीछे पीछे तना जाता रहता है और वह न केवल अपने शरीर वरन इस धागे को भी अपने साथ घसीटती हुई जमीन से छत की ओर गमन करती है।

मकड़ी का औसत धागा जो हमें दिखाई देता है वह सैकड़ों न दिखने वाले पतले धागों से वैसे ही बना है जैसे कि हम बहुत से धागे बँटकर मोटा रस्सा बनाते हैं। इतने पर भी यह लचकदार होता है और आसानी से खिंचकर सवाया हो सकता है। जाले अक्सर हवा के झोंके या दूसरे कारणों से टूटते रहते हैं। मकड़ी टूटे धागे जोड़ने में बहुत कुशल है वह टूट-फूट की मरम्मत ऐसी बूँटी से करती है जैसे इलैक्ट्रिक वैल्डिंग वाले धातु खंडों की भी नहीं कर सकते। जोड़ की जगह से धागा फिर दुबारा नहीं टूटता। ध्यानपूर्वक देखने से इस जाले की बुनावट मछली, चिड़िया या हिरन पकड़ने के लिए शिकारियों द्वारा बनाये गये जाल की अपेक्षा कहीं अधिक कुशलता के साथ की गई प्रतीत होती है। कीड़ा इसमें एक बार फँसा कि फिर उससे जीवित बच निकलना प्राय: संभव ही नहीं होता।

मकड़ी का जाला रेशम की तुलना में भी कहीं अधिक मजबूत होता है। आस्ट्रेलिया और मैडागास्कर के आदिवासी मकड़ियों के जाले से मछली पकड़ने के जाल तथा तन ढकने के आवश्यक वस्त्र तैयार करते थे जो सुन्दर भी लगते थे और टिकाऊ भी होते थे। जहाँ तहाँ रेशम के कीड़ों की तरह मकड़ी को भी उनका जाला प्राप्त करने के लिए पाला गया है पर उसमें खर्च अधिक और आय कम होने से बन्द कर दिया गया।

शीत ताप सहने की तितिक्षा शक्ति मकड़ी में इतनी होती है जितनी तथाकथित योगी तपस्वियों में भी नहीं पाई जाती। वह बाईस हजार फुट ऊंची हिमाच्छादित हिमालय की चोटियों पर भी पाई गई है और जमीन के भीतर दो हजार फुट गहरे उन गर्तों में भी जहाँ का ताप मान काफी अधिक होता है। उसकी संवेदन शक्ति और स्मरण शक्ति मनुष्य की तुलना में कहीं अधिक सूक्ष्म होती है।

प्राणि शास्त्रियों ने संसार के विभिन्न भागों में प्राय: 14 हजार जाति की मकड़ियाँ खोजी हैं। इनमें पानी के भीतर रहने वाली और जलरोधी जाला बनाने वाली मकड़ियाँ भी सम्मिलित हैं। वर्ग की दृष्टि से इन्हें 'लूता' संज्ञा दी जाती है। इनका शरीर सिर और धड़ के दो भागों में बँटा होता है। सिर में आठ आँखें और धड़ में आठ टाँगें होती हैं। उनकी टाँगों के अन्तिम भाग के बनावट और क्रिया-कुशलता ऐसी होती है जैसी मनुष्य में हाथ के पंजों की। अपनी सारी क्रिया कुशलता में मकड़ियाँ इन्हीं टाँगों में जुड़े पंजों से काम लेती हैं।

मकड़ी के पिछले भाग में कई खोखली घुंडियाँ होती हैं। प्रत्येक घुंडी के मुख पर एक छिद्र होता है। उनके भीतर एक तरल द्रव भरा रहता है। जाला बनाते समय मकड़ी इस तरल द्रव से भरी घुंडी कोठरी पर भीतरी दबाव डालती है और वह बाहर निकलने लगता है। हवा लगते ही वह सूख जाता है और धागा बन जाता है। जाले को इच्छानुसार पतला मोटा करने के लिए वह घुंडी के छिद्र को आवश्यकता के अनुरूप छोटा-बड़ा कर लेती है। कई बार तो यह धागे इतने बारीक होते हैं कि आँखों से सीधी तरह दिखाई भी नहीं पड़ते।

कुछ मकड़ियाँ अन्धी होती हैं पर उनकी स्पर्श शक्ति तथा संवेदना शक्ति ऐसी अद्भुत होती है कि शरीर से छूने वाले रेडियो कंपन उसे समीपवर्ती परिस्थितियों का पूरा ज्ञान करा देते हैं। फलस्वरूप उसका क्रिया-कलाप ऐसे ही चलता रहता है मानों आँखें भी उसे प्राप्त हों। गंध शक्ति उनमें कम होती है पर स्पर्श शक्ति में वे दूसरे कीड़ों से कहीं अधिक आगे होती हैं और किसी को छुए बिना उसके विद्युत कम्पनों का अनुभव करके ही वे आवश्यक जानकारी प्राप्त कर लेती हैं।

मित्रघात और विश्वास घात में मनुष्य ने अब भारी प्रवीणता प्राप्त कर ली है। किसी समय में लड़ कट कर ही शत्रुता का परिचय दिया जाता था। अब वे हथियार पुराने पड़ गये। किसी को मीठे व्यवहार से मित्र बनाना और फिर उसका विश्वास प्राप्त करके ऐसी पटक मारना कि वह चित्त हो जाय, यही आज की सर्व प्रचलित आक्रमण पद्धति है। छल के सहारे किसी को आसानी से उदरस्थ किया जा सकता है। पशुओं को लाड़ प्यार से पालना और फिर देखते-देखते मित्र से शत्रु बनकर उनके गले पर छुरी फेर देना; यही स्वादिष्ट माँसाहार का सरल तरीका है। इस रीति नीति को मनुष्य अपने मित्रों और स्वजन संबंधियों के साथ बरतता रहता है।

मकड़ी इस क्षेत्र में भी मनुष्य से पीछे नहीं। वह मकड़े को प्रेमपाश में फँसाती है। अपना मतलब जब निकल जाता है तो आँखें बदलने में एक क्षण नहीं लगाती और इस निर्ममता के साथ उदरस्थ कर जाती है मानो उसका उससे कुछ संबंध तो क्या कुछ परिचय भी न हो। मकड़ियाँ अपने सहचरों के प्रति भी निष्ठुर होती हैं। उन्हें अपने अण्डों तथा नन्हें बच्चों तक ही लगाव होता है। पति को तो वे आमतौर से खा ही जाती हैं। प्रणयकेलि का आनन्द लेने के उपरान्त वे मकड़े का दूसरा उपयोग स्वादिष्ट आहार के रूप में ही करती हैं। मैत्री और सान्निध्य के नाम पर एक तीर से दो शिकार करने वाली मकड़ियों का यह व्यवहार निर्मम ही कहा जा सकता है। किशोर मकड़ी यदि थोड़ी मजबूत हुई तो अपने ही जाले में रहने वाले भाई बहिनों को भी चट कर जाती है।

नर और मादा मकड़ी अलग-अलग किन्तु पास-पास जाला तान कर रहते हैं और आवश्यकतानुसार दांपत्य धर्म निबाहते हैं। मादा मकड़ी भूखी होने पर नर पर आक्रमण कर देती है और उसे ही चट कर जाती है। मकड़ा आमतौर से इस युद्ध में हारता है। विवाह के साथ मौत के गठबंधन से मकड़ा परिचित होता है इसलिए वह यथासंभव अपना बचाव करने के लिए सतर्क भी रहता है और जान बचाने के लिए सहचरी भूखी न रहने पाये इसका ध्यान रखता है। मकड़े पहले अपनी कमाई मकड़ी को सौंपते है और बची खुची खाकर ही संतोष करते हैं।

मकड़ी लड़ाकू होती है और बहादुर भी। उसमें विष कम नहीं होता। मनुष्य की उस क्रूरता को भी वह चुनौती देती है

जिसकी वह आमतौर से बहादुरी और वीरता के नाम पर डींगें हाँकता रहता है। उसे आये दिन युद्ध करना पड़ता है और वह जान हथेली पर रख कर इस बहादुरों से लड़ती है कि उससे कई गुने आकार वाले शत्रु को भी प्राण गँवाने पड़ते हैं। सर्प की तरह मकड़ी में तेज विष भी होता है जिसे वह अपने शिकार को अथवा शत्रु को परास्त करने के लिए आवश्यकतानुसार प्रयोग करती रहती है। इस संसार के लिए मनुष्य अधिक उपयोगी है या मकड़ियाँ, यह फैसला होना अभी बाकी है। क्योंकि मकड़ियाँ व्यवहार में कितनी ही निष्ठुर क्यों न हों वे संसार में स्वच्छता रखती हैं और ऐसे तत्वों को साफ करती हैं जो मानव जीवन के लिए संकट उत्पन्न करते हैं। मकड़ी की यह उपयोगिता स्पष्ट है। पर मनुष्य तो गंदगी, धूर्तता, दुष्टता और अशान्ति फैलाने के अतिरिक्त कितना कुछ उपयोगी काम करता है इस संदर्भ में विस्तृत लेखा-जोखा लेने के बाद ही कुछ कहा जा सकेगा।

मकड़ियाँ देखने में घिनौनी या गन्दी भले ही प्रतीत होती हों पर उनकी उपयोगिता मनुष्य जीवन के लिए असाधारण है। वे घर की छतों और कोनों में अपने जाले बनाती हैं उनमें अपनी घर गृहस्थी बसाती हैं। आहार पकड़ती हैं। इससे बाहर निकल कर वे घर भर में रेंगते रहने वाले उन कीड़ों को खाती रहती हैं जो आसानी से दिखाई भी नहीं पड़ते किन्तु अपने हानिकारक प्रभाव से मानव जीवन के लिए भयानक हानि उपस्थित करते हैं। यह कीड़े खाद्य पदार्थों में शामिल होकर पेट में चले जाते हैं। और संकट खड़ा कर बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं। मकड़ी ही है जो बिना वेतन, बिना पोषण और बिना धन्यवाद पाये हानिकारक कीड़ों से जूझती हुई हमारे लिए सुरक्षात्मक लड़ाई लड़ती रहती हैं। ब्रिटेन के कृमि विशेषज्ञों का कथन है कि इंग्लैंड की मकड़ियाँ जितने कीड़े मकोड़े हर वर्ष खाती हैं उनका वजन इस देश की समस्त आबादी से भी अधिक होता है।

चलो बीज बोते हैं

चलो बीज बोते हैं
हरे भरे जीवन का सपना संजोते हैं
चलो बीज बोते हैं

संयम की धरती पर सब्र का बीज बोयेंगे
सदाचार के पानी से सींचेंगे
सुना है, ऐसे बहुत मीठे फल होते हैं
चलो बीज बोते हैं

संकल्प की धरती पर ज्ञान का बीज बोयेंगे
पसीने को पानी बना उसी से सींचेंगे
इसी तरह तो सफलता के फल होते हैं
चलो बीज बोते हैं

संवेदना की धरती पर दोस्ती का बीज बोयेंगे
आंख के पानी से इसे सींचेगे
ऐसे खुशी के फल वाले कभी नहीं रोते हैं
चलो बीज बोते हैं

जब मंडी में जाएं फल और हो इनका विश्लेषण
तो यह न मन में आए
कि बोया पेड़ बबूल का तो आम कहाँ से पाए
संतुष्टि के फल वाले ही चैन से सोते हैं
चलो बीज बोते हैं

गिरिजा अरोड़ा
भारतीय वन सर्वेक्षण
देहरादून

प्रकृति और पर्यावरण एक दूसरे पर निर्भर हैं, जबकि प्रदूषण एक मानवकृत समस्या है।

संगीता शाह 'शकुन' कवयित्री, लेखिका, सरस्वती विहार, देहरादून

पर्यावरण.. यानी हवा, पानी, सूरज की रोशनी, जंगल जानवर, भूमि, पेड़-पौधे आदि प्राकृतिक चीजें,... जब इन चीजों के महत्व की अनदेखी करके मनमाने ढंग से उनका शोषण किया जाता है तो प्रकृति में असंतुलन पैदा हो जाता है, और प्रकृति अपने सबसे भयानक रूप... बादल फटना या बाढ़ आना, में दिखाई पड़ने लगती है।

ब्रह्मांड में पृथ्वी ही एक ऐसी जगह है जहां पर जीवन की संभावना पाई जाती है। आदि काल से मानव प्रकृति के सानिध्य में पला बढ़ा है, अपने जीवन-यापन की तमाम जरूरतें उसे प्रकृति से प्राप्त होती रही हैं, और वह भी अपने शुद्ध रूप में। परिणामस्वरूप मानव का मन, मस्तिष्क विकसित होता चला गया और आधुनिक युग तक आते आते तो वह अपने विकास की सब सीमाएं पार कर गया, यद्यपि मानव ने बौद्धिक विकास के उन सभी आयामों को छू लिया जिनकी कभी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी, परंतु इसके साथ ही प्रकृति से उसकी दूरी बढ़ती चली गई। सभ्य व शिक्षित होने के साथ मानव की जरूरतें तो बढ़ी हीं, साथ ही उनका रंग-रूप और आकार भी बदल गया। क्योंकि उसकी तमाम आवश्यकताएं किसी ना किसी रूप में प्रकृति से ही पूरी होती हैं सो, जंगल, पेड़, पहाड़ डायनामाइट से उड़ाए जाने लगे जिसकी वजह से आस पास के तमाम दूसरे पहाड़ों पर भी दरारें पड़ जाती हैं जो पहाड़ों और सड़कों के दरकने के रूप में सामने आते हैं। तमाम तरह के परमाणु परीक्षण जमीन को भीतर तक हिला देते हैं और वह अपनी प्राकृतिक अवस्था से विचलित हो जाती है जिसका परिणाम सुनामी जैसी भयानक विनाशकारी लहरें होती हैं। यह तो मनुष्य की बौद्धिक व तकनीकी प्रगति की क्षमता का परिणाम है जबकि भौतिक प्रगति ने तो तमाम प्रकृति को ही हिला डाला है। प्रकृति का अनावश्यक दोहन पर्यावरण में असंतुलन पैदा करने लगा, कभी बाढ़ तो कभी अकाल इसका परिणाम है। भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जंगलों की कटाई, हरे-भरे फलदार वृक्षों की कटाई ईंधन, फर्नीचरों के लिए अंधाधुंध पेड़ों की कटाई तो करना, परंतु बदले में प्रकृति को कुछ न देना, यानि एक पेड़ तक नहीं लगाना। जबकि होना यह चाहिए-

इतना सा संदेश है इतना ही अभिप्राय
पेड़ अगर इक काटिए दीजै चार लगाए

आधुनिक युग तक आते-आते तो जैसे मानव एक तरह से प्रकृति विरोधी हो गया और अपनी इस भूल का परिणाम उसे कुछ वर्ष पहले उत्तराखण्ड की केदार घाटी में प्रकृति के प्रचंड विनाशकारी रूप में भी देखने को मिला।

पर्यावरण जीवन के लिए प्रकृति द्वारा उत्पन्न की गई वह अनुकूल परिस्थिति है जो कि जीवन का अस्तित्व बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, हालांकि यह आधुनिक युग में मानव-निर्मित तकनीकी उन्नति के विकृत रूप के कारण बद से बदतर स्थिति उत्पन्न करने की ओर अग्रसर है। सत्य तो यह है कि पर्यावरण प्रदूषण आज सबसे बड़ी समस्या बन चुका है जिससे पृथ्वी का समस्त प्राणी जगत हर स्तर पर प्रभावित है। प्रकृति पृथ्वी पर पर्यावरण का

अपनी तरह से व उचित संचालन करती है जिसे मानव निर्मित तकनीकी प्रगति द्वारा अनधिकृत क्षति पहुंचाई जा रही है और जिसके भयंकर दुष्परिणाम देखने में आए दिन आते रहते हैं। गर्मी में अत्यधिक गर्मी, सर्दी में अत्यधिक सर्दी, जिसकी वजह से जान-माल का अत्यधिक नुकसान। पृथ्वी पर जीवन जारी रखने के लिए पर्यावरण की मौलिकता बनाए रखने की जरूरत है। विश्व 'पर्यावरण दिवस' 5 जून, इसकी एक पहल है। पर्यावरण प्रदूषण किसी एक शहर या समुदाय की नहीं बल्कि पूरे विश्व की समस्या है जो किसी एक के प्रयास से खत्म नहीं की जा सकती यदि इसका ठीक से निवारण नहीं किया गया तो एक दिन जीवन का अस्तित्व ही खत्म हो सकता है। मानव की उन्नत जीवन स्तर की आकांक्षा ने वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण, मिट्टी प्रदूषण, वनों की कटाई, अम्ल वर्षा आदि खतरनाक पर्यावरण प्रदूषण को जन्म दिया है। प्रकृति के संतुलन में किसी भी प्रकार की बाधा सीधा-सीधा पर्यावरण द्वारा प्राणी जगत को प्रभावित करती है। प्रदूषण पर्यावरण को नुकसान पहुंचाता है और प्रदूषित पर्यावरण प्रकृति को रुष्ट कर देता है। आज गरीब ही नहीं अमीर और विकसित देश भी पर्यावरण प्रदूषण समस्या से जूझ रहे हैं, और अपने देश को तो साफ-सफाई के मसले पर दो तरफा लड़ाई लड़नी पड़ रही है... एक तो यहां पर गंदगी निपटाने वाले संसाधन ही नहीं हैं और जो हैं भी तो उन से भी परहेज किया जाता है। विकसित देशों में तो इससे निपटने के लिए कई तरह के नियम बनाए गए हैं जिनका कड़ाई से पालन किया जाता है जैसे अपने परिसर से बाहर कचरा फेंकने पर शुल्क या कूड़ेदान का प्रबंध आदि । अपने देश में भी कचरा प्रबंध के नियमों का नवीनीकरण किया गया है । 2016 में 16 साल बाद म्यूनिसपल सॉलिड वेस्ट (मैनेजमेंट एंड हैंडलिंग) रूल्स 2000 की जगह इस कानून को लागू किया गया। नए नियमों में कचरा प्रबंधन के दायरे को नगर निगम से भी आगे बढ़ाया गया है, यह नियम अब शहरी समूहों, जनगणना वाले कस्बों, अधिसूचित औद्योगिक टाउनशिप, भारतीय रेल के नियंत्रण वाले क्षेत्र, हवाई अड्डे, रक्षा प्रतिष्ठान, एयर बेस, बंदरगाह, विशेष आर्थिक क्षेत्र, केंद्र एवं राज्य सरकारों के संगठनों, तीर्थ स्थलों, धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थानों पर भी लागू किए गए हैं, इन नियमों की समग्र निगरानी के लिए पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय के सचिव की अध्यक्षता में एक 'केंद्रीय निगरानी समिति' गठित की गई जिसके तहत कोई भी खुद का उत्पन्न किया हुआ कचरा अपने परिसर से बाहर सार्वजनिक स्थलों पर, सड़कों पर, नाली पर या जलीय क्षेत्र में ना तो फेंकेगा, ना जलाएगा अथवा दबाएगा ।

ठोस कचरा उत्पन्न करने वालों को 'उपयोगकर्ता शुल्क' अदा करना पड़ेगा जो, कचरा बीनने वालों को मिलेगा ।

निर्माण व तोड़फोड़ से उत्पन्न कचरे को.... निर्माण व विध्वंसक अपशिष्ट प्रबंधन नियम 2016 के अनुसार संग्रहीत करने के बाद अलग से निपटाना होगा। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार... जैसे माचिस की एक तीली संपूर्ण दुनिया को स्वाहा करने की ताकत रखती है वैसे ही सूक्ष्म मात्रा की गंदगी भी महामारी फैला सकती है।

ये प्यार है

वो परिन्दा था
उड़ना ही था
ये जो तुमने पोंछे उसके आँसू
परों को सहलाया
चोंच में रखा एक दाना
उसकी उड़ानों में
दर्ज हो ना हो
तुम्हारा नाम
उसकी आत्मा में बस जायेगा
एक रिश्ता
बेनाम
जिसे प्यार कहते हैं !

डॉ. सम्राट सुधा
शिक्षाविद् एवं साहित्यकार, गणेशपुर, रुड़की

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

स्वतंत्रता दिवस समारोह-2018

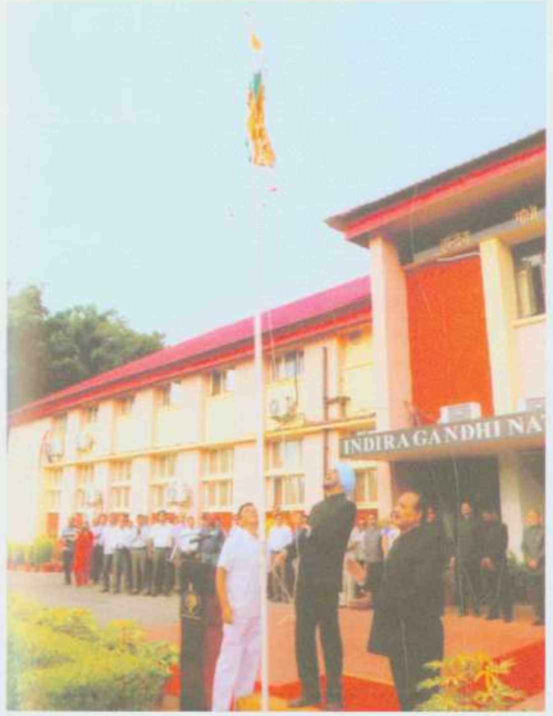

गणतंत्र दिवस समारोह-2019

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

अकादमी खेल 2018

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

वार्षिक प्र.मु.व.सं. कार्यशालाः 19 नवम्बर 2018

वरिष्ठ वानिक कार्यशालाः 14-15 नवम्बर 2018

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

अकादमी द्वारा आयोजित विभिन्न सेवाकालीन प्रशिक्षण

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

भा.व.से. 2017-19 पाठ्यक्रम : माननीय राष्ट्रपति महोदय एवं माननीय उपराष्ट्रपति महोदय से औपचारिक भेंट

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

दीक्षान्त समारोह–2018

अरण्य

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

दीक्षान्त समारोह–2018

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

भा.व.से. 2017-19 पाठ्यक्रम का शुभारंभ

भा.व.से. 2018-20 पाठ्यक्रम (परि.) का वन महानिदेशक महोदय से औपचारिक परिचय कार्यक्रम

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

अतिथि व्याख्यान

सतर्कता जागरूकता सप्ताह - 2018: सतर्कता शपथ

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

हिन्दी दिवस-2018

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

हिन्दी कार्यशालाएँ: 2018

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

नराकास के तत्वावधान में हिन्दी निबंध प्रतियोगिता का आयोजन

अरण्य अंक-16 का विमोचन

17वां संजय कुमार सिंह स्मृति व्याख्यान

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

25वां कीर्तिचक्र पी. श्रीनिवास स्मृति व्याख्यान

स्व. एस. मणीकंदन स्मृति व्याख्यान

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

माननीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री महोदय द्वारा अकादमी में नवनिर्मित व्यायामशाला का शुभारंभ

माननीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री महोदय द्वारा अकादमी में नए स्वीमिंग पूल हेतु भूमि पूजन

अरण्य

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

सांस्कृतिक गतिविधियांः पोंगल एवं वसंत पंचमी उत्सव

शीतोत्सव-2019

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी : गतिविधियाँ

सेशेल्स के माननीय राष्ट्रपति श्री डैनी फौरे द्वारा अकादमी भ्रमण: 27 जून 2018

भारतीय संस्कृति और भस्म

वीणापाणी जोशी, पूर्व सदस्य 'उत्तराखण्ड संस्कृति, साहित्य एवं कला परिषद'
गोपाल कुंज, 26/7 इन्द्रपथ, देहरादून

भस्म, भस्मीभूत, राख, ऐश, खारू, छारू, क्षार, खाक, भभूत, स्वाह, अग्निसात अनायास ही ये नाम क्यों आया मेरी स्मृति में? मैं आज स्वयं अचम्भित हूँ। शायद स्वयंभू भगवान शंकर ने भेजा है यह विचार बिन्दु। हमारे देश की संस्कृति में राख के बहुत से संदर्भ और अर्थ हैं। राख एक वह, जो जीवन का कटु सत्य है। प्राणांत के पश्चात् यह देह भी भस्मसात होगी ही। चन्दन तो दुर्लभ है किन्तु उस समय श्मशान घाट में जो भी ईंधन उपलब्ध होगा उसी में चिता सजेगी। कई बार यह विचार मेरे मन को कुरेदता है कि पर्यावरण ह्रास हो जाने पर वृक्षों के वैध अथवा अवैध पातन से लकड़ी बहुत कम रह गई है। केवल हिन्दू धर्म में अन्तिम संस्कार में चिता में भस्म कर दिया जाता है, किन्तु इसाई धर्म में भी तो अंतिम संस्कार के लिए लकड़ी का ताबूत चाहिए। भाग्यशाली और समृद्ध हों तो शुद्ध घी और चंदन की लकड़ी से चिता सजाई जाती है। जैसा कि कृष्ण भक्त मीरा ने कहा है "जोगी जा मत जा मत जा, जो चंदन की चिता सजाऊँ अपने हाथ जला (जगा) जा।" मैं सोचती हूँ कि वास्तव में शवदाह संस्कार विद्युत भट्टी में ही होना चाहिए। किन्तु हरिद्वार और काशी भ्रमण के दौरान मैंने घाट पर उस दुर्गन्ध का अनुभव भी किया जो बिजली की भट्टी में शवदाह से वातावरण में चिरायन्ध बनकर मन को क्लेश पहुँचा रही थी।

मैंने सोचा कि मुझे कम से कम लकड़ी की चिता में भस्म होने का कुछ तो या पूरा अधिकार है, क्योंकि स्वयं हमारी संस्था (मध्य हिमालय की सांस्कृतिक साहित्यिक एवं सामाजिक चेतना के लिए प्रतिबद्ध संस्था) 'धाद महिला समिति (पंजि.) द्वारा स्कूलों में अपनी प्रिय सदस्यों के साथ कई स्थानों पर वृक्षारोपण किया है जो पिचानवें प्रतिशत अनुरक्षित हैं।

बात आयी राख की। कुछ तो दूर-दूर से श्रद्धालु आकर अपने प्रियजनों के शवदाह की राख पूज्या माँ गंगा में अस्थि विसर्जन के साथ प्रवाहित कर देते हैं। श्मशान घाट पर तो नित्य ही यह प्रक्रिया होती रहती है। भारतवर्ष के प्रथम प्रधानमंत्री पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था "जब मैं मर जाऊँ, मेरी चिता की भस्म भारतवर्ष के किसानों के खेतों में बिखेर दी जाय।" अब गंगा प्रदूषण को देखते हुए यह प्रथा प्रतिबन्धित कर विकल्प खोजना ही होगा। बढ़ती जनसंख्या के मध्यनजर यह भी एक कटु सत्य है कि जब महान व्यक्तियों का देहान्त होता है तो उनकी दूरस्थ क्षेत्रों से लाई गई चिता भस्म परिजनों द्वारा पावन नदी गंगा जी में प्रवाहित की जाती है और उस घटना के फोटो समाचार पत्रों में तथा दूरदर्शन पर दिखाये जाते हैं। इसी विषय को लेकर मैंने लखनऊ में लगभग सन् 1984-85 में चलचित्र देखा था 'सारांश', जिसमें 28 वर्षीय अभिनेता अनुमप खेर का (अब प्रौढ़ एवं सफल लोकप्रिय) उम्रदराज़ पिता का अभिनय काबिल-ए-तारीफ था। मार्मिक विषय था विदेश में दुर्घटनावश मृत युवा पुत्र की भस्म हिन्दुस्तान आने वाली थी जिसे लेने उसके माता-पिता हवाई अड्डे पहुँचे थे। उसी कथावस्तु पर बनी थी यह फिल्म ।

मैं जब विवाहोपरान्त अपनी ससुराल श्रीनगर गढ़वाल गई तो उस जमाने में हर घर में लकड़ी का चूल्हा जलता था। तब हीटर, गैस, स्टोव आदि प्रचलन में नहीं थे। उजाले के लिए मिट्टी तेल का काँच की हाँडी वाला लैम्प, लालटेन और रसोई में मिट्टी तेल की ढिबरी का प्रकाश होता था। खाना बनाने के पश्चात् बगल के कोने में बनाये गये नियत स्थान पर चूल्हे की राख उठाकर डाल दी जाती उसमें जलते अंगारे दबा दिये जाते क्योंकि उस समय इतनी आसानी से माचिस उपलब्ध न होती। यदि बरसात का मौसम हुआ और माचिस सील गई तो सारी तीलियाँ छुस् .... हो कर बुझ जातीं और माचिस खत्म। इसलिए सुबह राख हटाकर उसके नीचे दबा अंगारा निकालकर कागज या छिल्ले से चूल्हा सुलगाया जाता। कई बार पड़ोसियों द्वारा एक दूसरे के घर से आग माँगने का चलन भी था। राख के ब्याज से पड़ोसियों का सुख-दु:ख भी पूछ लिया जाता था और पारस्परिक संवाद

के माध्यम से प्रेमभाव भी बना रहता था।

यह भी समझने की बात है कि यदि राख की ढेरी पुख्ता न हो तो जलते अंगारे बुझने का डर भी स्वाभाविक था। हुक्का पीने वाले तो तम्बाखू भरी चिलम में चिमटा लेकर वहीं से अंगारे उठाकर हुक्के की सोड़ लगाया करते थे। जाड़ों में घर के लोग जलते चूल्हे के पास बैठकर आग तापते, मुख्य चूल्हे पर दाल का भड्डू पीछे सब्जी की कड़ाही और अगिंडी में भात भपाया जा रहा होता। घर के लोग जाड़ों में चूल्हे के चारों ओर बैठकर आग तापते और दिन भर की गतिविधियों की समीक्षा भी हो जाया करती। रोटी राख पर फैले अंगारो में सिकती जो बहुत मीठी तथा पौष्टिक होती। भोजनोपरान्त राख उठाकर कोने में सँभाल दी जाती। चूल्हे को गोबर-मिट्टी से लीप-पोत कर शुद्ध कर दिया जाता। मिट्टी की सोंधी महक रसोई में फैल जाती। जब राख से बर्तन माँजते तो बर्तनों की चमक लाजवाब होती और बर्तनों को धोने का पानी क्यारियों मे डाल दिया जाता। तो सब्जियाँ इतने प्राकृतिक रूप से पनपती उनमें कीड़ा भी नहीं लगता। राख को क्यारी में डालने से प्राय: कीटाणु भी मर जाते।

पहाड़ी क्षेत्रों में अन्न की सुरक्षा के लिए भण्डार के बड़े-बड़े पात्रों जैसे कोन्ना, गेडू, टंकी आदि में अनाज भर दिया जाता जैसे धान, गेहूँ, कुलथ, भट्ट, उड़द, मसूर तथा सोयाबीन इत्यादि। उनमें ऊपर से छनी हुई राख बुरका दी जाती और ढक्कन लगा दिया जाता ताकि बरसात में कीड़े घुन, टेरू, पोथल्या वगैरा आदि न लगें और अन्न सुरक्षित रहे। पर्वतीय क्षेत्रों में जब घरों में भट्ट भूनकर खाये जाते हैं खासकर काले भट्ट किन्तु वे तवे या कढ़ाई में भूनने पर जलने न पायें इसके लिए राख डालकर भूने जाते और गरम-गरम राख सहित ले जाकर यदि खाँसी, जुकाम का रोगी हो उसे सूँघने के लिए दिया जाता, चिकित्सा की तरह। दूरस्थ पर्वतीय क्षेत्रों में भला साबुन कहाँ से आता तो लोग नदी या जलाशयों के निकट आग जलाकर बड़े बर्तन में पानी खौलाते उसमें भीमल के तने की छाल के रेशे और छनी हुई राख डालकर, उबालकर झाग तैयार करके उससे कपड़े धोये जाते। उसमें कपड़े बहुत साफ धुलते और कभी-कभी बाल धोने के लिए भी उस पानी का प्रयोग किया जाता था। इस प्रक्रिया को स्थानीय भाषा में 'छोया लगौणू' कहा जाता है।

राख की सांस्कृतिक उपयोगिता के तो क्या कहने। कुछ दिगम्बर साधु जो नागा बाबा भी कहलाते हैं, शरीर पर आजीवन केवल राख मलकर अपने ध्येय (नियम) की रक्षा करते हैं। जनता ने उन्हें कुम्भ मेले के अवसर पर, समाचार पत्रों में एवं दूरदर्शन पर उनके दृश्य खूब देखे होंगे। कई बार तीर्थ स्थानों में गुफाओं में धूनी रमाए तपस्या करते साधु देखे जा सकते हैं। मैंने श्री बदरीनाथ धाम की दिशा में सीमान्त गाँव माणा जाते समय मार्ग में स्वयं भी गुफाओं में भस्म रमाए तपोलीन साधु देखे हैं। हमारे लोकगीतों और शास्त्रीय संगीत में अनेक प्रसंगो में भस्म का जिक्र आया है जैसे "भस्म अंग गौरी संग अधिक सुहाय है.." कवियों ने अपनी कविताओं में भी भस्म और भभूत का खूब प्रयोग किया है। किन्नर कवि श्रीचन्द्रकुँवर बर्त्वाल ने 'ज्योति ओंकार' कविता में लिखा है

"शोभित चन्द्र कला मस्तक पर, भष्म विभूषित नग्न कलेवर

कटि पर कृष्ण गजानिन सा घन गिरती घोर घोष कर पद पर

वज्र छटा सी दीप्त सुरधुनि।"

तथा

शिव पंचाक्षर स्तोत्र में -

"नागेन्द्रहाराय त्रिलोचनाय भस्मांगरागाय विभूषिताय"

इसी प्रकार सर्वोच्च देवता गरलपायी भगवान शंकर की स्तुति में रचे गये भस्म शब्दयुक्त न जाने कितने काव्य कलापूर्ण स्तोत्र रचित हैं, और न जाने कितने ग्रन्थों में उपलब्ध हैं। "वेद सार शिव स्तव" में "भवं भास्वरं भस्मना भूषितांगम् भवानी कलत्रम भजे पञ्चवक्त्रम्"

आर्युवेद में भी राख का विशेषकर पहाड़ी गाय के गोबर से बने उपले की राख का कई प्रकार से उपयोग किया जाता है। किसी बच्चे के पेट में दर्द होने पर गाँवों में जब डाक्टर और दवा नहीं होती थी तो बुजुर्ग लोग, दादी-नानी बच्चे के पेट में जलती अंगीठी से गर्म राख निकालकर मल देते और सेक करते थे तो आराम आता था। कई बार जब बच्चे की तकलीफ का पता नहीं चलता था और लगातार रोता था तो उसे गोद में लेकर तंत्र-मंत्र को जानने वाले सयाने लोग

रखवाली करते। मंत्र बोल-बोल कर राख का स्पर्श करते हुए कभी माँ दुर्गा का, कभी हनुमान चालीसा का, कभी भगवान शंकर के, या अन्य श्रद्धेय देवी देवताओं का पाठ करते और बालक के माथे पर राख का तिलक लगाते और बच्चे दर्द मुक्त हो कर सो जाते।

भारतीय संस्कृति में गो माता तो पूजनीय है ही तथा उसके त्याज्य गोमूत्र एवं गोबर की सर्वोत्तम जैविक खाद तो है ही इसके अतिरिक्त गाय से प्राप्त दूध, दही, घी, मक्खन आदि पदार्थों का भी आरोग्यता के लिए प्रयोग किया जाता है। गाय के गोबर के उपले की राख के भी अनेक प्रयोग हैं। संक्रमण से जब कभी गंज रोग हो जाता है और सर पर गोल चकत्ते बन जाते व सर के बाल उड़ जाते हैं तो उसके उपचार के लिए भी राख की आवश्यकता होती जो एक अलग विधि है। गाय के गोबर के उपले की राख में अत्यधिक औषधीय तत्व हैं। यों तो सरकार द्वारा स्वास्थ्य विभाग के प्रयास से संक्रामक रोगों पर काफी नियन्त्रण कर लिया गया है। फिर भी कभी-कभार कहीं न कहीं रोगों के दर्शन हो ही जाते हैं। बड़ी माता भयानक संक्रामक रोग है। जो शरीर पर निकले फफोलों के सूखने पर खुरण्ड से फैलता है उससे चेहरा कुरूप हो जाता है। कई बार आँखों की रोशनी भी चली जाती है जिस समय उसके फफोले सूखने लगें तो उस समय उस स्थान पर कपड़े से छनी हुई गाय के गोबर के उपले की राख मलने से दाग नहीं पड़ते। यह अनुभूत सत्य है। Chicken Pox (छोटी माता) भी संक्रामक रोग है किन्तु उतना खतरनाक नहीं। इसमें भी फफोले सूखने के समय गाय के गोबर के उपले की राख लगा देने से दाग नहीं पड़ते। अन्यथा रोगोपरान्त महीनों तक दाग बने रहते हैं।

हमारे तीर्थ स्थानों पर साधु महात्माओं द्वारा सनातन धूनी जलती रहती है। चमोली जिले के रूद्रप्रयाग जनपद में स्थित महातीर्थ त्रिजुगीनारायण के मंदिर में हवन कुण्ड में तीन युगों से अखण्ड धूनी जलती रहती है। जो भी तीर्थ यात्री वहाँ जाते है उन्हें प्रसाद में वही राख मिलती है जिसे वह माथे पर धारण करते हैं और घर में बाँटने के लिए भी उस पवित्र भस्म को साथ लेकर आते हैं। यों भी हवन के पश्चात् आहुति प्रदत्त राख के ढेर से त्रायुक निकालकर माथे और कंठ में प्रसाद स्वरूप धारण किया जाता है। फागुन माह की पूर्णिमा के दिन पूरे देश में होली का त्योहार बड़े उत्साह और उमंग से मनाया जाता है जिससे अहंकारी राजा हिरण्यकश्यप की कथा जुड़ी है। होलिका दहन के अवसर पर शुभ मुहुर्त में लग्नानुसार होली जलायी जाती है, जो रात भर जलती है। भोर की बेला में उस राख को पानी में घोलकर उससे भी लोग होली खेलते हैं। प्रसन्न होते हैं कि भक्त प्रहलाद की विजय और अहंकार के रूप में कभी भस्म न होने वाली उसकी बुआ होलिका भस्मसात हुई।

अब बात आई परमाणु संयंत्रों की। उष्मतापीय विद्युत संयंत्र (Thermal Power Plant) से निकलने वाली राख एक समस्या थी। इतनी अधिक मात्रा में बनने वाली राख का निवारण कैसे हो जो भयंकर पर्यावरण प्रदूषण फैला रही है। हमारे अधुनातन आविष्कारक प्रबुद्ध वैज्ञानिकों ने इसका भी उपाय खोजा है और उस राख में सीमेन्ट मिलाकर साँचे में डालकर ईटें तैयार की जाती हैं जो भवन निर्माण के काम आती हैं। यह कार्य बड़े पैमाने पर हो चुका है और हो रहा है। एक विशेष बिन्दु ध्यान देने योग्य यह भी है कि सूती कपड़ा बिना ग्लेज्ड कागज, घासपात और केवल झाड़-झंकाड़ और लकड़ी की ही राख खेतों या क्यारियों में डालने से खाद का काम करती है। रबड़, टायर, थर्माकोल, प्लास्टिक की थैलियाँ तथा अन्य प्रकार के सिन्थेटिक उत्पाद का कचरा जलाकर उसकी राख हानिकारक होती है। उसे खेतों में भूल कर भी नहीं डालना चाहिए। वो राख धरती की उर्वरा शक्ति को हानि पहुँचाती है साथ ही वायुमण्डल को भी प्रदूषित करती है।

देहरादून से 10 कि.मी. दक्षिण दिशा में जंगल के बीच एक पावन तीर्थ है जिसका नाम है 'लक्ष्मण सिद्ध'। बहुत से लोग लक्ष्मणसिद्ध के नाम से उच्याणा धरते है, मनौती मांगते हैं कि, इच्छा पूर्ण होने पर वे प्रसाद के रूप में भेली चढ़ाएंगे और फिर दर्शन को आएंगे। साल के वृक्षों से आवृत जंगल के बीच स्थित यह सुन्दर मंदिर चारों और बंदरों से घिरा रहता है। मंदिर के बीचों-बीच हवन कुण्ड है जिसमें यज्ञ की भस्म रहती है। आने वाले श्रद्धालुओं को वहाँ के पुजारी प्रसाद स्वरूप भस्म और गुड़ ही देते हैं। कहा जाता है कि जब मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम रावण से युद्ध कर रहे थे तो युद्ध में मेघनाद के शक्ति प्रहार से श्री लक्ष्मण जी इस

स्थान पर अचेत हो गए थे इसी जगह लंका के वैद्य सुषेण ने बजरंग बली हनुमान द्वारा संजीवनी पर्वत से लाई गई संजीवनी बूटी से उपचार कर उनकी मूर्छा दूर की थी। लक्ष्मण जी पुनर्जीवित हो कर युद्ध में विजयी हुए श्रीराम के साथ अयोध्या वापस आऐ थे। अत: यह स्थान विशेष पुण्यस्थली माना जाता है। इस स्थान को पवित्र मान कर जनमानस इसे पूजता आया है और उसी राख को शीर्ष और मस्तिष्क पर धारण करते हैं।

मनोकामना पूर्ण होने पर दोबारा आते हैं। द्रोणघाटी की उत्तर दिशा में सुदूर स्थित एक और प्रसिद्ध तीर्थ है 'सेम-मुखेम' जहाँ का देवता 'नागराज' है। स्थानीय बोली में 'नागरजा' कितने ही समुदायों के कुल देवता हैं। वहाँ पर भी भगवान श्रीकृष्ण का भव्य मंदिर है। प्रवेश द्वार पर शेष नाग की फन फैलाए आकृति विद्यमान हैं। नागरजा श्री कृष्ण का ही रूप माना जाता है वहाँ भी भक्तों की भीड़ जुटी रहती है जिसका उल्लेख अनेक विद्वान तथा स्व. धर्मानंद उनियाल जी अपनी पुस्तक में कर चुके हैं। धर्मानन्द जी वरिष्ठ खोजी पत्रकार रहे हैं जिन्होंने उत्तराखण्ड के सभी सिद्धपीठों का वर्णन किया है। उत्तराखण्ड में लगभग सभी सिद्धपीठों में भस्म को अति पवित्र मानकर प्रसाद देते हैं और भक्तजन कुंकुम, रोली तथा चन्दन की तरह उसे शिरोधार्य करते हैं, अपनी आस्था और विश्वास के फलस्वरूप।

राख से संदर्भित मुझे भारतवर्ष के महान दार्शनिक विद्वान चार्वाक का यह श्लोक याद आया

"यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतंपिवेत्।

भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमन: कुत :।।"

(जब तक जीना है सुखपूर्वक जीना चाहिए कर्जा करके भी घी पीना चाहिए भस्म होने वाली यह देह भला फिर कहाँ से आएगी।)

आयुर्वेदिक दृष्टिकोण से कहें अथवा अन्यथा मनुष्य के गम्भीर रोगों के उपचार में विविध प्रकार की भस्म का महत्वपूर्ण उपयोग है। मुक्तापिष्ठी भस्म, (जो सच्चे मोती को संगमरमर की खरल पर दूध डालकर हफ्तों पीसने के बाद भस्म विधिवत बनाई जाती है,) सुवर्ण भस्म, रजत भस्म, मूँगा भस्म, अबरक भस्म इत्यादि। वरदान और श्राप के सन्दर्भ में भस्मासुर का उल्लेख करना भी कदाचित समीचीन होगा जो घोर तपस्या से प्राप्त वरदान के अहंकारवश स्वयं ही शापित हो कर भस्म हो गया था।

आखिर मुझे यह लेख लिखने की सूझी कैसे और क्यों ?मेरी आलमारी में उपयोगी वस्तुओं के साथ एक छोटी शीशी में सम्भाली हुई राख मिली। आज से लगभग 30-35 वर्ष पूर्व मेरे पति अपने सरकारी दौरे के अवसर पर प्रसिद्ध तीर्थ तिरजुगी (त्रियुगी) नारायण भी गये जो जिला चमोली में स्थित है। वहाँ पर भगवान शंकर के दर्शन कर तीन युगों से चली आ रही यज्ञधूनी में से पुरोहित द्वारा प्रसाद स्वरूप दी गई भस्म ले कर आये थे, जो मैंने अपने परिजनों को बाँटी थी और अपने हिस्से की सम्भाल कर रक्खी थी जिसे मैं भूल चुकी थी। सहसा नजर पड़ने से मैंने वह शीशी अपने पूजा के स्थान में रख दी और पूजा के बाद नियमित रूप से उस भस्म का टीका अपने मस्तिष्क पर लगाने लगी। न जाने क्यों उसे लगाने के बाद मुझे एक अलौकिक अनुभूति होने लगी चाहे इसे आस्था कहें या श्रद्धा किन्तु वह एक पवित्र वस्तु है जो सुदुर हिमालय के एक मंदिर से दुर्लभ प्रसाद स्वरूप प्राप्त हुई थी। जिस स्थान पर न जाने कितने संत महात्माओं, ऋषिमुनियों तथा भक्तों ने यज्ञानुष्ठान कर पावन आहुति दी होगी। भस्म में परिवर्तित होने के लिए निश्चित ही वह भस्म तो शिरोधार्य होगी ही।

अब अन्त में फिर 'सारांश' चलचित्र की बात करते हैं। जब प्रौढ़ दम्पति राख लेकर बेंच पर बैठे तो थोड़ी सी राख भूमि पर गिर पड़ी और फिर जब एक माह बाद वह उस स्थान पर घूमने आए और उसी बेंच पर बैठे तो उन्होंने देखा कि जहाँ पर राख गिरी थी वहाँ पर हरियाली उग आई है। जिसे देखकर वह बहुत अचम्भित और प्रसन्न हुए। क्योंकि राख एक शाश्वत शब्द है जिसमें सत्य छिपा है, उसका सदुपयोग शिव है और परिणाम सुन्दर। (सत्यं शिवं सुन्दरम्)

महात्मा गांधी-जैसा पढ़ा और समझा

सुश्री मीना गुप्ता, सहा. निदेशक, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, नई दिल्ली

He is a man whom gun cannot frighten
To whom money cannot buy
To whom women cannot seduce .

महात्मा गांधी के विषय में उक्त पंक्तियों में लंदन के "लार्ड मरे " ने अपने विचार प्रकट किए हैं। गांधी ऐसे व्यक्ति है जिसे गोली-बंदूक से डराया नहीं जा सकता। पैसों में इतनी शक्ति नहीं है जो गांधी जी को खरीद सके, उनका ईमान डिगा सके और इस धरा पर तो क्या, यदि स्वर्ग से मेनका अप्सरा भी पृथ्वी पर उतर आएं तो इनकी तपश्चर्या को भंग करने का सामर्थ्य उसमें नहीं है।

गांधी का जन्म हिंदू परिवार में हुआ था और किसी भी आम साधारण हिंदू व्यक्ति की तरह वे सभी धर्मो का समान रूप से आदर करते थे । उनका सम्मान करते थे। गांधी जी ने हिंदू धर्म के विषय में विचार व्यक्त करते हुए कहा "हिंदू धर्म" इसे जैसा मैने समझा है, मेरी आत्मा को पूरी तरह तृप्त करता है। मेरे प्राणों को आप्लावित कर देता है... जब संदेह मुझे घेर लेता है, जब निराशा मेरे सम्मुख आ खड़ी होती है, जब घनघोर अंधेरे में मुझे प्रकाश की एक भी किरण नजर नहीं आ रही होती है तब मैं "भगवद्गीता" की शरण में जाता हूँ और उसका कोई न कोई श्लोक मुझे सांत्वना दे जाता है और मैं घोर विषाद के बीच तुरन्त मुस्कराने लगता हूँ।"

सरकारी कार्य से अभी हाल ही में अहमदाबाद जाने का अवसर मिला! संयोग ही था कि साबरमती आश्रम के निकट में ही रहने की सुविधा भी प्राप्त हुई। मैं उस दौरान प्रात: काल टहलने के लिए साबरमती आश्रम में ही चली जाती थी। यहीं से "आश्रम भजनावलि" पुस्तक खरीदी। इसकी भूमिका में आ. काका कालेलकर ने लिखा है कि एक दिन गांधी जी ने मुझसे पूछा आज आश्रम में अधिकांश लोग हिन्दू ही है। अगर ऐसा न होकर मुसलमान या ईसाई अधिक होते तो प्रार्थना का स्वरूप कैसा होता? मैंने कहा जिस तरह हमने भिन्न भिन्न पंथ के श्लोक लिए हैं। वैसे उनकी प्रार्थना के हिस्से भी लिए होते। गांधी जी ने कहा, इतना ही नहीं, गीता की जगह हम कुरान शरीफ या बाइबल रख देते। हमारा आश्रम किसी एक धर्म का नहीं है। सब धर्मो का हैं। सबकी सहूलियत जिसमें अधिक हो, वैसा ही वायुमंडल हमें रखना चाहिए। सर्व-धर्म-सम-भाव का यही अर्थ है और इसीलिए इस भजनावलि में हमें बौद्ध मंत्र, कुरान की आयतें, जरतुश्ती गाथा, गीता पाठ स्त्री वर्ग की प्रार्थना, उपनिषद स्मरण, पाण्डव गीता, द्वादश पंजरिका स्तोत्र सभी का समावेश मिलता है। श्रुति में भी कहा गया है कि "ईश्वर एक है, किंतु भक्त लोग अपनी चितवृत्ति के अनुसार अलग-अलग नाम रूप से उसकी उपासना करते हैं।"

गांधी जी के अनुसार ये सब एक ही परमात्मा की उपासना सिखाते हैं। नाम रूप की विविधता हमें न केवल सहिष्णुता का पाठ पढ़ाती है बल्कि सभी धर्मो के प्रति एक समान भाव और विचार रखने के लिए भी प्रेरित करती है। और यह विविधता हिंदू धर्म की कमी नहीं है, हिन्दू धर्म को कमजोर नहीं बनाती है बल्कि यही उसकी विशेषता है और यही हमें बल देती है, मजबूत बनाती है।

आज गांधी जी हमारे लिए फिर से प्रासंगिक बन गए है। अभी कुछ समय लगभग एक माह पहले अखबार में एक खबर छपी थी। हत्या के मामले में गैंगस्टर अरूण गवली, नागपुर की सैंट्रल जेल में उम्रकैद की सजा काट रहे हैं। जेल में महात्मा गांधी की विचारधारा और उनके आदर्शो पर

आधारित एक प्रतियोगिता कैदियों के लिए आयोजित की गई। यह प्रतियोगिता गैरसरकारी संगठनों, सहयोग ट्रस्ट, सर्वोदय आश्रम और मुंबई सर्वोदय मंडल द्वारा आयोजित कराई गई थी। जिसमें लगभग 160 कैदियों ने भाग लिया। परीक्षा परिणाम की घोषणा करते समय आयोजक मंडल ने बताया कि अरूण गवली ने 80 में से 74 प्रश्नों के उत्तर सही-सही दिए। हमें खुशी है कि उसने जेल में गांधीवादी विचारधारा और सिद्धांतों को आत्मसात किया है।

"वैष्णव जन तो तेने कहिए जे पीड़ पराई जाणए रे
पर दुखे उपकार कटे तोय मन अभिमान न आणे रे ..."

गांधी जी आखिरी आदमी को अपना लक्ष्य मानते थे। मुझे आज भी अपनी NCERT द्वारा प्रकाशित पुस्तकों के प्रारंभ में "गांधी जी का तिलिस्म" लिखा वह पृष्ठ याद है जिसमें लिखा होता था कि जब कभी भी तुम्हारे मन में शंका पैदा हो या तुम अपना ही अधिक विचार करो तब यह कसौटी अपने सामने रखना। जिस गरीब से गरीब, दुर्बल से दुर्बल मनुष्य को तुमने देखा हो, उसका चेहरा याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम तुम उठाने जा रहे हो। वह उस मनुष्य के लिए किस प्रकार उपयोगी होगा।

धर्म चरत,माडधर्मम्, सत्यं वदत,नानृतम्।
दीर्घ पश्यत,माहस्वम, परं पश्यत, माडपरम्।।

हमें ऐसे कार्य करने चाहिए जिनसे सबको खुशी मिले। किसी का जीवन बदले। सबसे प्रेम करो। दूसरे का दुख समझो, उसका दुख बांटो। प्रातः काल उठ कर सबसे पहला काम ईश-संकल्प करते हुए हमें प्रतिदिन यह संकल्प लेना चाहिए कि मैं केवल भगवान से ही डरूं और इस दुनिया में किसी से भी ना डरूं। किसी के प्रति बुरा भाव ना रखूं । अन्याय से डरूं नहीं। डर कर पीछे हटूं नहीं। असत्य वचन न कहूं। क्योंकि जैसा हम सोचते है। वैसे ही विचार मान्यताएं हमारी बन जाती है और यही मुखर होकर हमारे शब्द बनते है। शब्द हमारे कार्य बन जाते है। और कार्य हमारी आदतें।

अहिंसा सत्यम् अस्तेयं, अकाम-क्रोध-लोभता।
भूत-प्रिय-हितेहा च धर्मोडयं सार्ववर्णिक।।

यदि हमें समाज को उन्नत बनाना है उसको आगे बढ़ाना है तो प्रेम और अहिंसा ऐसे दो आधारभूत मूल्य हैं जिनसे यह कार्य सम्पन्न किया जा सकता है। प्रेम-अहिंसा शाश्वत मूल्य हैं। मानवीय मूल्य हैं। हिंसक तरीके अपनाकर न तो हम हिंदू धर्म की रक्षा कर सकते है न किसी और धर्म की । किसी भी धर्म में यह शिक्षा नहीं दी गई है। सिख धर्म के गुरू ग्रंथ साहिब हो या इस्लाम धर्म की पवित्र कुरआन। ईसाई धर्म की बाइबिल भी कहती है अगर हमने हिंसा का रास्ता अपनाया तो एक दिन अवश्य ऐसा आएगा जब हम अपना सुंदर और बहुमूल्य जीवन खो देंगे। गांधी जी के अनुसार लोकमत की शक्ति तलवार से कहीं अधिक बढ़कर होती है।

यदि हम से कभी कोई गलती हो भी जाए, किसी प्राणिमात्र को कष्ट हो भी जाए तो हमें बेहिचक अपनी गलती मान लेनी चाहिए। क्योंकि "अपनी गलती को स्वीकार करना झाड़ू लगाने के समान है जो धरातल की सतह को चमकदार और साफ कर देती है।" यदि आप किसी को बदलना चाहते हैं, किसी से परिवर्तन की अपेक्षा रखते है तो हमें सबसे पहले वह परिवर्तन, वह बदलाव अपने जीवन में लाना होगा ।

Be the change you wish to see in the world

अपने सुधार के बिना परिस्थितियाँ नहीं सुधर सकतीं। अपना दृष्टिकोण बदले बिना जीवन नहीं बदला जा सकता। इस बात से हम जितनी जल्दी अवगत हो जाएं उतना ही अच्छा होगा दूसरे लोग हमारा कहना न मानें यह हो सकता है पर हम अपनी ही बात, स्वयं न मानें इसका कोई कारण नहीं कोई औचित्य नहीं। अपनी मान्यताओं को यदि हम स्वयं ही कार्यरूप में परिणत न करेंगे तो हम अपने परिवार से साथी सहयोगियों से समाज से कैसे आशा कर सकते हैं कि वे उस मार्ग का अनुसरण करें जिस पर आप चलने की शिक्षा दे रहे हैं।

एक तथ्य यह भी है कि राष्ट्रपिता महात्मा की उपाधि से नवाजे गए गांधी जी को कभी भी शांति का नोबल पुरस्कार नहीं दिया गया। हालांकि यह भी कहा जाता है कि वर्ष 1937 से लेकर 1948 के बीच उन्हें पांच बार नोबल पुरस्कार के लिए मनोनीत किया गया । गांधी जी को "राष्ट्रपिता" की उपाधि किसी गांधीभक्त या गांधीवादी विचारधारा वाले व्यक्ति ने नहीं दी। गांधी जी को "राष्ट्रपिता" कहा नेताजी सुभाष चंद बोस ने। आजाद हिंद सेना की स्थापना के पश्चात गांधीजी को भेजी गई अपील में उन्होंने "राष्ट्रपिता" से आशीर्वाद मांगा था और गांधी जी को "महात्मा" की उपाधि कवीन्द्र रविन्द्र नाथ टैगोर ने दी थी।

गांधी जी का व्यक्तित्व कितना सार्वभौम था, पूरे विश्व में वे कितने लोकप्रिय-आदरणीय थे, उसका अनुमान इस एक उदाहरण से लगाया जा सकता है। जिन अंग्रेज शासकों के विरूद्ध गांधी जी संघर्ष कर रहे थे वे भी उनका सम्मान करते थे। संयुक्त प्रांत के गवर्नर सर हैरिस ने प्रांतीय प्रशासन सलाहकार समिति में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा "Then Gandhi said"

मोती लाल नेहरू ने कहा कि ...Say Mr. Gandhi, what do you mean by Gandhi

हैरिस मुस्कराए और कहा कि... Shall I address Chirst as Mr. Chirst ? कितना सम्मान करते थे - कितना आदर भाव था ।

इस लेख का अंत मैं जापानी संत कवि तोशियो साका की कविता से करना चाहूंगी

"जब तक इस धरती का एक भी व्यक्ति उदास है, दुखी है गांधी उसकी उदासी, उसके दुख में हिस्सा बंटाने के लिए बराबर आते रहेंगे -"

वे आवागामन से न कभी मुक्त होंगे और न होना चाहेंगे। जैसा कि श्रीमद भगवद गीता में भी कहा गया है कि

"यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्"।।

पेड़ों की मुस्कुराती डालियाँ

पेड़ों की वह मुस्कुराती डालियां, कराती याद हमें बचपन की वादियां
वह पेड़ों के महकते झूले, वह हवा के चहकते झौंके
बचपन जिसकी छांव में गुजरा, वह सुन्दर ललित उपवन हमारा
पेड़ हैं धरती का श्रृंगार, जन-धन का एकमात्र आधार।

तरक्की तो पाई हमने, पेड़ों को आधार बनाकर
पर अंजाम भी भुगतना होगा, यदि किया हमने प्रकृति का अनादर
वह दौर अब चला गया, जब पलता था प्रकृति के आंचल में बचपन
मोबाईल, इलेक्ट्रानिक के नये दौर ने, आज हमें प्रकृति से दूर कराया।

दृढ़ संकल्प को आत्मसात कर, हो जाएं सब भारतवासी तैयार
अपनी सुन्दर धरती मां का, हरित स्वर्ग से करें श्रृंगार

एक सच्चे भारतवासी होने के, आदर्श को करें स्वीकार
जीवनरक्षक इन पेड़ों के, घनत्व को बढ़ाने का करें विचार।

एक पेड़ जो हम सबने लगाया, तो एक अभिनव भारत है हमने बनाया
अपनी आने वाली पीढ़ी को, हम यह विश्वास दिलाएंगे
पेड़ों का तुम करो सम्मान, देश की परम्पराओं का रखो मान
विश्व शक्ति बन उभर रहा, जो यह देश हमारा है,
योगदान इसमें प्रकृति का, हम सबने स्वीकारा है।

ममता उप्रेती
अवर श्रेणी लिपिक,
सचिव कार्यालय, भा.वा.अ.शि.प.

अनुवाद में होने वाली सामान्य भूलें

विजयराम नौटियाल, सहायक निदेशक, केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो, नई दिल्ली

स्वतंत्र भारत के संविधान निर्माताओं ने हिंदी का महत्व समझते हुए, इसे राजभाषा के रूप में 26 जनवरी, 1950 को अंगीकार करने की घोषणा की। बाद में राजभाषा अधिनियम, 1963 द्वारा यह व्यवस्था की गई कि हिंदी संघ की राजभाषा होगी, किंतु अंग्रेजी के इस्तेमाल की छूट तब तक बनी रहेगी जब तक राज्यों के विधान मंडल अंग्रेजी का प्रयोग समाप्त करने के लिए संकल्प पारित न कर लें। ऐसी स्थिति में प्रशासनिक या कार्यालयीन अनुवाद आज स्वतंत्र भारत की आवश्यकता बन गई है। कई वर्षो की अंग्रेजी शासन व्यवस्था में राजकाज की भाषा अंग्रेजी होने के कारण शीर्ष स्तर पर शासन व्यवस्था चलाने से संबंधित आदेश, नियम, विनियम, प्रक्रिया साहित्य, लेखा संबंधी मूल सामग्री अंग्रेजी में तैयार की गई। स्वाधीनता के उपरांत देशवासियों ने देश के लिए लोकतांत्रिक प्रणाली का शासन स्वीकार किया और यह अनुभव किया कि शासन लोकतंत्रात्मक तभी हो सकता है जब उसका सारा कारोबार जनभाषा में हो।

इसी प्रयोजन से केंद्रीय अनुवाद ब्यूरो जैसी संस्था पिछले 40-45 वर्षो से संपूर्ण कार्यालय साहित्य को हिंदी में अनूदित करने के लिए प्रयत्नशील है। कार्यालयीन साहित्य में विशेष रूप से भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों/विभागों/निगमों/उपक्रमों/कार्यालयों में प्रयुक्त होने वाली सामग्री जैसे कोड, मैनुअल, प्रशिक्षण साम्रगी (इंजीनियरी, वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रकृति के) स्थानी प्रकृति के फार्म, वित्त एवं बजट संबंधी नियम, विनियम, रिपोर्ट, राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) के अंतर्गत जारी किए जाने वाले दस्तावेज शामिल हैं। इन विषयों का अनुवाद करते समय अनुवादक को न केवल दोनो भाषाओं की जानकारी होनी चाहिए अपितु संबंधित विषय के साथ-साथ कार्यालय पद्धति की भी जानकारी होनी चाहिए। कार्यालय पद्धति की जानकारी के अभाव में अनुवादक अर्थ का अनर्थ कर सकता है। उदाहरण के लिए अनुवादक यदि किसी सरकारी पत्र का अनुवाद कर रहा हो तो उसे "From" के लिए "प्रेषक" लिखना होगा। इस तरह "To" शब्द के लिए "सेवा में" और "Sir" शब्द के लिए "महोदय" शब्द का प्रयोग करना पड़ेगा। यदि कोई व्यक्ति कार्यालय पद्धति से अपरिचित है तो वह इन शब्दों का रूढ़ अथवा प्रचलित अर्थ नहीं समझ पाएगा। क्योंकि अनुवाद में हिंदी का विशिष्ट भाषा स्वरूप प्रयोग में लाया जाता है। इस भाषा में व्यवहार पर्यायों की बहुलता पाई जाती है। इस प्रकार कार्यालय अनुवाद की कुछ व्यावहारिक समस्याएं है जिन पर निम्नलिखित उदाहरणों के माध्यम से विस्तार से चर्चा की जा रही है:

1. **This letter may be sent to director under intimation to me:**

   गलत अनुवाद: मुझे सूचित करते हुए यह पत्र निदेशक को भेजा जाए।

   प्रस्तावित अनुवाद: यह पत्र निदेशक को भेजा जाए और उसकी सूचना मुझे भी दी जाए।

यदि इन दोनों अनुवादों का तुलनात्मक विश्लेषण किया जाए तो पहला वाला अनुवाद अर्थ की दृष्टि से तो ठीक है किंतु उसमें हिंदी भाषा की प्रकृति, संरचना और सरलता की दृष्टि से उतनी बोधगम्यता नहीं है जितनी दूसरे वाले (प्रस्तावित अनुवाद) अनुवाद में है। पहले वाले अनुवाद में लक्ष्य भाषा में निर्मित वाक्य में अंग्रेजी भाषा की छाया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है, उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा की हू-बहू नकल है। जबकि दूसरे वाले अनुवाद में हिंदी भाषा की प्रकृति एवं संरचना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इसमें अनुवाद पढ़ने में कही भी क्लिष्टता नहीं है। और कार्यालय प्रक्रिया के अनुसार भी उचित है क्योंकि निदेशक का पद सर्वोच्च पद होने के नाते उनकी गरिमा को ध्यान में रखते हुए पत्र पहले उन्हें भेजा जा रहा है तथा उसकी सूचना निचले स्तर पर कार्यरत अधिकारी को दी जा रही है। यह विवेक कार्यालय पद्धति की जानकारी रखने वाला व्यक्ति ही महसूस कर सकता है। इसलिए कार्यालयीन अनुवाद करते समय अनुवादक को कार्यालय पद्धति की सूझबूझ एवं समझ होनी भी जरूरी है।

2. **President of India will be visitor of this university:**

   गलत अनुवाद: भारत के राष्ट्रपति इस विश्वविद्यालय के आंगतुक अतिथि होंगे।

   प्रस्तावित अनुवाद: भारत के राष्ट्रपति इस विश्वविद्यालय के कुलाध्यक्ष होंगे।

कार्यालयीन अनुवाद की दृष्टि से पहला अनुवाद शाब्दिक अनुवाद है अर्थात् मूल पाठ अंग्रेजी भाषा के शब्दों का हिंदी रूपांतरण। कार्यालयीन अनुवाद में कुछ शब्द संदर्भ विशेष की दृष्टि से विशिष्ट पारिभाषिक अर्थ रखते है। जैसे शिक्षा शब्दावली में visitor शब्द का प्रयोग विशिष्ट अर्थ में किया जाता है। अनुवादक यदि इस पारिभाषिक शब्द के मानक अर्थ से परिचित नहीं है तो वह उस शब्द का सामान्य अर्थ में प्रयोग कर कामचलाऊ अनुवाद कर सकता है जैसा कि ऊपर पाठ में किया गया है। उसे ऐसे अवसरों पर संकल्पना को समझकर शब्द के विशिष्ट संदर्भ सापेक्ष प्रयोगगत अर्थ को ध्यान में रखकर पारिभाषिक शब्दावली में शब्दों के सामान्य और विशिष्ट मानक रूपों की खोज कर सही पर्याय का इस्तेमाल करना चाहिए, ताकि कार्यालयी अनुवाद का प्रयोजन पूरा हो सके।

3. **Slow but sure transformation is taking place in the country:**

   गलत अनुवाद: देश में परिवर्तन धीरे-धीरे किंतु निश्चित रूप से हो रहा है।

   प्रस्तावित अनुवाद: देश में विकास तो हो रहा है किंतु धीरे-धीरे हो रहा है।

उक्त वाक्य में अनुवादक ने अंग्रेजी भाषा की संरचनात्मक व्यवस्था को हिंदी भाषा की संरचनात्मक व्यवस्था में प्रतिस्थापित करने का प्रयास किया है जिससे वाक्य में निहित अर्थ पूरी तरह से हिंदी भाषा की संरचनात्मक व्यवस्था में आबद्ध नहीं हो पाया है। जबकि दूसरे वाले अनुवाद में (प्रस्तावित अनुवाद) अनुवादक ने लक्ष्य भाषा की प्रकृति के अनुरूप वाक्य में प्रयुक्त शब्द के अर्थ को सन्निकटतामूलक अर्थ देने वाले शब्दों का प्रयोग कर वाक्य को हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुसार ढालने का प्रयास किया है। विवेक और अभिव्यक्ति की यही परिपक्वता कार्यालयीन अनुवाद को उत्कृष्टता प्रदान करती है।

4. **It will be appreciated if the above mentioned discrepancies are reconciled:**

   गलत अनुवाद: यदि उपर्युक्त विसंगतियों को दूर किया जाता है तो यह अत्यंत प्रशंसनीय होगा।

   प्रस्तावित अनुवाद: यदि उपर्युक्त विसंगतियों का समाधान कर दिया जाता है तो हम आपके आभारी होंगे।

उपर्युक्त दोनों अनुवादों का तुलनात्मक अध्ययन करने पर प्रतीत होता है कि पहले वाले अनुवाद में अनुवादक ने शाब्दिक अनुवाद किया है और भाषा की प्रकृति के अनुरूप शब्दों का चयन नहीं किया है। कार्यालय में किसी विषय में समाधान किए जाने की स्थिति में प्रशंसा नहीं की जाती बल्कि आभार व्यक्त किया जाता है; अतः अनुवादक को कार्यालय की पद्धति के अनुसार विषय का संदर्भ लेते हुए आभार प्रकट करने जैसे शब्द का इस्तेमाल करना चाहिए था। और इसी के कारण अनुवाद कमजोर पड़ गया जबकि दूसरे वाले अनुवाद (प्रस्तावित अनुवाद) में अनुवादक ने संदर्भ के अनुसार शब्द का प्रयोग करते हुए उपयुक्त अभिव्यक्ति का इस्तेमाल किया है जिसके फलस्वरूप अर्थ में बोधगम्यता और स्पष्टता आई है।

5. **Quite a few Ministries are facing financial crises for the last ten months:**

   गलत अनुवाद: कुछेक मंत्रालय पिछले 10 महीनों से वित्तीय संकट का सामना कर रहे हैं।

   प्रस्तावित अनुवाद: अधिकतर मंत्रालय पिछले 10 महीनों से वित्तीय संकट का सामना कर रहे हैं।

अंग्रेजी विदेशी भाषा होने के कारण कभी-2 हमें अनुवाद की विशिष्ट अभिव्यक्तियों के अर्थ का पता नहीं चल पाता

है। सामान्य व्यक्ति तो उक्त वाक्य का अनुवाद "कुछेक" ही करेगा किंतु अंग्रेजी का सम्यक ज्ञान रखने वाला व्यक्ति ही ऐसी विशिष्ट अभिव्यक्तियों का सटीक अनुवाद कर पाएगा। इसलिए कार्यालयीन अनुवाद करते समय अनुवादक को विभिन्न Negative (नकारात्मक) तथा positive (सकारात्मक) अभिव्यक्तियों के अर्थ की जानकारी होनी चाहिए अन्यथा अनुवाद करते समय अनुवाद का अनर्थ भी हो सकता है।

6. **The leave application of Shri Ram Lal, Hindi Officer from your office who is at present under training in ISTM, New Delhi is forwarded herewith for further necessary action:**

   गलत अनुवाद: आपके कार्यालय के हिंदी अधिकारी, श्री राम लाल, जो इस समय आई.एस.टी.एम. में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे है, का छुट्टी का आवेदन अगली आवश्यक कार्रवाई के लिए भेजा जा रहा है।

   प्रस्तावित अनुवाद: आपके कार्यालय के हिंदी अधिकारी श्री राम लाल, इस समय आई.एस.टी.एम में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहें हैं। उनका छुट्टी का आवेदन आगे की आवश्यक कार्रवाई के लिए अग्रेषित किया जा रहा है।

स्पष्ट है कि पहले वाले अनुवाद की वाक्य संरचना हिंदी की प्रकृति के अनुरूप नहीं है। श्री राम लाल और उनका आवेदन एक दूसरे से अलग-थलग पड़ गए हैं। यदि मूल संरचना का अनुकरण न कर हिंदी की सहज प्रकृति के अनुरूप अनुवाद किया होता तो यह अधिक सरल और सहज होता क्योंकि हिंदी वाक्य संरचना में उसके निकटस्थ अवयव यथासंभव निकटतम स्थान पर रखे जाते हैं। अंग्रेजी के उपर्युक्त वाक्य में "श्री राम लाल का छुट्टी का आवेदन (कर्ता)" "अग्रेषित किया है (क्रिया)" से दूर है। इन दोनों के बीच में श्याम लाल का विवरण बताने वाला उपवाक्य अंतर्विष्ट किया गया है जो अंग्रेजी की प्रकृति की दृष्टि से ठीक है किंतु हिंदी की प्रकृति की दृष्टि से वाक्य को दो खंडों में विभक्त करना आवश्यक होगा, ताकि वाक्य में सरलता, सहजता और सुबोधता लायी जा सके।

इसी तरह अंग्रेजी का एक वाक्य इस प्रकार है:

7. **Good Governanace gives rise to an informed, participative and responsible society with shared values, norms, standards and aspirations:**

   गलत अनुवाद: "सुशासन साझा मूल्यों, मानदंडों और आकांक्षाओं सहित एक जानकार, सहभागी तथा उत्तरदायी समाज का निर्माण करता है"।

   प्रस्तावित अनुवाद: "सुशासन एक ऐसे सूचना सम्पन्न, सहभागी तथा उत्तरदायी समाज का निर्माण करता है जिसके मूल्य, मानदंड और आकांक्षाए साझा हों।

यदि इस अनुवाद को अनुवाद की कसौटी पर रख कर देखा जाए तो इसमें अंग्रेजी भाषा की छाया स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इसमें पठनीयता, बोधगम्यता और अर्थ मूलनिष्ठता का अभाव दिखाई देता है। यदि इस पाठ का अनुवाद इस प्रकार से किया जाता है कि "सुशासन एक ऐसे सूचना सम्पन्न, सहभागी तथा उत्तरदायी समाज का निर्माण करता है जिसके मूल्य, मानदंड और आकांक्षाए साझा हों" तो अनुवाद वाक्य विन्यास एवं हिंदी भाषा की प्रकृति के अनुसार अधिक संप्रेषणपरक एवं बोधगम्य होगा। यहीं पर अनुवाद व्यक्ति सापेक्ष हो जाता है।

8. **Know all men by these present that I, son/daughter of Shri here in after called "Stipendiary" (which expression shall unless excluded by or repugnant to the context include his heir, administrator or assignee) by myself to pay to the president of India (hereinafter called the Government) on demand and without demur a sum of Rs. 1000/- or if payment is made in a country other than India, the equivalent of the said sum in the currency of that country converted at the official rate of exchange between that country and India:**

   In the witness thereof the said stipendiary having put his/her respective hands the day and the year herein above written:

   गलत अनुवाद: सभी उपस्थित व्यक्तियों को ज्ञात हो कि मैं .... जो श्री........ का पुत्र/पुत्री हूँ और इसके बाद वृत्तिका ग्राही कहा गया है (इस अभिव्यक्ति के अंतर्गत जब तक संदर्भ अपवर्जित और विरुद्ध न हो, उसके उत्तराधिकारी, प्रशासक और प्रतिनिधि भी शामिल है) भारत के राष्ट्रपति को (जिन्हें इसके बाद सरकार कहा गया है) मांग की जाने पर अनापत्ति सहित 1000/- रूपए राशि या भुगतान यदि भारत से बाहर किसी देश में किया जाता है तो उसके देश की मुद्रा में उक्त राशि उस देश और दर पर परिवर्तित समतुल्य राशि का भुगतान करने के लिए स्वयं को आबद्ध करता हूँ/ करती हूँ।

   उक्त के गवाह के रूप में ऊपर लिखित तिथि को हस्ताक्षर कर दिए हैं।

   प्रस्तावित अनुवाद: यह सब को ज्ञात हो कि मैं ..... जो श्री .... का पुत्र/ की पुत्री हूँ, जिसे इसमें आगे वृत्तिकाग्राही कहा गया है (इसके अंतर्गत उसके वारिस, प्रशासक और समनुदेशिती भी है जब तक कि ऐसा संदर्भ से अपवर्जित या उसके विरूद्ध नहीं है) भारत के राष्ट्रपति को (जिन्हें इसमें आगे सरकार कहा गया है) मांग की जाने पर आपत्ति के बिना 1000/- रूपए की राशि या यदि संदाय भारत से भिन्न किसी देश में किया जाता है तो उस देश की मुद्रा में उक्त राशि की, उस देश और भारत के बीच की सरकारी विनिमय दर से संपरिवर्तित समतुल्य राशि का संदाय करने के लिए अपने आप को आबद्ध करता/ करती हूँ।

   इसके साक्ष्य स्वरूप उक्त वृत्तिकाग्राही ने इस पर ऊपर लिखित/लिखी तारीख को अपने हस्ताक्षर कर दिए हैं।

उक्त दोनों अनुच्छेदों का अनुवाद जब आप देखेंगे तो पता चलेगा कि अनुवादक ने पहले वाले अनुवाद में सामान्य शब्दों का प्रयोग किया जिससे विधिक अनुवाद में प्रयुक्त होने वाली भाषा में वैधानिकता का पुट प्रतीत नहीं होता है। इसी प्रकार दूसरे वाले अनुवाद में अनुवादक ने विधिक शब्दों का प्रयोग करते हुए अनुवाद में वैधानिकता लाने का प्रयास किया और केवल उन्हीं शब्दों का प्रयोग किया है जो विधि विशेषज्ञों द्वारा निर्धारित किए गए है ताकि अनुवाद को प्रयोजनमूलक बनाया जा सके।

इस प्रकार अंत में यह कहा जा सकता है कि अनुवाद अर्थ संप्रेषण की प्रकिया होने के कारण अनुवादक को इसमें व्याकरण के स्तर पर, सृजनात्मक के स्तर पर, व्याख्या के स्तर पर तथा सांस्कृतिक तत्वों के स्तर पर विचार करना होता है और कार्यालय की प्रक्रिया के अनुरूप अर्थ का संप्रेषण करना होता है।

बिखरती नहीं है नदी

बिखरती नहीं है नदी
ले ही लेती है
नियत पथ अपना ...
ये शिलाएं
भग्न खंड हैं पर्वत का
और ये पर्वत नहीं हैं
रेत देगी नदी देह इनकी
यूँ नदी कोमल बहुत है
रेत होना हर टूटन की है नियति
नदी प्रवाह को है
ये टुकड़े क्या पथ मोड़ेंगे उसका
स्वप्न है जीताजागता
हर नदी परमेश्वर का
और वे टूटने देते नहीं
विराट अपना सपना ....
यह हमारा प्यार भी
एक नदी है
शांत
लेकिन एकदूजे से मुखर
यह कोलाहल जगत् का
स्वार्थ के मैदान में
हलचल तो होगी
पर हमें क्या
इसी मैदान के किनारे
हमारे नेह की अनुपम डगर है
मोह हैं अनगिन
लालसाओं से आपूरित
इसी महासमर में
बोधचक्षु से सम्पन्न
नेह रथ है अपना ...
बिखरती नहीं है नदी
ले ही लेती है
नियत पथ अपना !!

डॉ. सम्राट सुधा
शिक्षाविद् एवं साहित्यकार
गणेशपुर, रुड़की

मैं छोटा हूँ

अच्छा ही है मैं छोटा हूँ
क्योंकि
मैं कहीं भी, कभी भी कैसी भी परिस्थिति में
किसी के साथ भी रह सकता हूँ
किसी के साथ भी खा-पी सकता हूँ
उठ-बैठ सकता हूँ
जमीन पर भी सो सकता हूँ
हँसी-मजाक कर सकता हूँ
किसी का गुस्सा भी सहन कर जाता हूँ
डांट सुन कर, सरल भाव से
उसकी ओर देख कर चुप भी हो जाता हूँ
कई बार, जो तुम नहीं कर सकते!

हाँ मैं भी टूट जाता हूँ
आम आदमी की तरह, कई बार
फिर सोचता हूँ क्या हुआ?
क्या आज का ही दिन थोड़ी है मेरे पास!
नहीं! इससे फिर कहीं भेंट भी हो सकती है
क्योंकि दुनिया गोल है।

दूसरे दिन उठता हूँ और लग जाता हूँ अपने काम पर
नई ऊर्जा, नई सोच के साथ
मैं खुद को भाग्य विधाता नहीं समझता
सम्मान करता हूँ उनमें बची इन्सानियत का
इसलिए जवाब नहीं देता
फिर भी उनके मिलने पर
नमस्कार करता हूँ अदब से
जो तुम नहीं कर सकते !

शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'
हिन्दी अनुभाग
महासर्वेक्षक का कार्यालय, भारतीय सर्वेक्षण विभाग, देहरादून

क्यों न हो प्रकृति का संरक्षण इस तरह

क्यों न हो प्रकृति का संरक्षण इस तरह,
कि, विकास के हर पहलू से पहले,
विचारणीय हो, धरा की दशा हर जगह,
विकास तो है ही देश के लिये सबसे पहले,
चाहे हो वह शहरीकरण, औद्योगीकरण,
हो या उसका मौद्रिक विकास से नाता,
चहुँओर विकास से ही है, देश का नाम जाना जाता,
पर अब सतत् विकास की ओर है, हमको जाना,
हो देश का सतत् विकास इस तरह,
कि बना रहे पर्यावरण का संतुलन सदा।
ये वृक्ष, ये सरितायें, ये पर्वत, ये धरा,
न हो विदोहित हर जगह,
क्यों न हो प्रकृति का संरक्षण इस तरह ।

निकिता राय एवं सौरभ दुबे
वन संवर्धन एवं वन प्रबंधन प्रभाग
उष्णकटिबंधीय वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

वन अग्नि

प्रवीण चन्द्र डियूंडी, कनि. सांख्यिकीय अधिकारी
भारतीय मानवविज्ञान सर्वेक्षण, उ.प. केंद्र, देहरादून

हिमालयी राज्यों में 11वां राज्य उत्तराखण्ड वन सम्पदा से परिपूर्ण है जिसका अधिकांश वन क्षेत्र पर्वतीय है। उत्तराखण्ड में वनाच्छादन लगभग 34,651 वर्ग किमी. है जो सम्पूर्ण भौगालिक क्षेत्रफल (53,483 वर्ग किमी.) का लगभग 65% है। राज्य में क्षेत्रफल की दृष्टि से सर्वाधिक वन क्षेत्रफल वाला जनपद पौड़ी गढ़वाल है जिसमें वनाच्छादित क्षेत्रफल 3271 वर्ग किमी. तथा सबसे कम वन क्षेत्रफल वाला जनपद ऊधम सिंह नगर है जिसमें वन का क्षेत्रफल 564 वर्ग किमी. है।

अन्य प्राकृतिक आपदाओं से अलग वन अग्नि वनों के लिए एक ऐसा दानव है जो वनों पर थोड़ी भी दया नहीं करता तथा बहुत सी वन सम्पदा एवं वन प्रजातियों को अस्तित्व में आने से पूर्व ही नष्ट कर देता है। हर वर्ष किसी न किसी कारण से वनाग्नि उत्तेजित हो ही जाती है और निगल जाती वो सम्पूर्ण प्राकृतिक सौंदर्य जो उन वनों में बसा करता है। वन विभाग के आंकडों के अनुसार वर्ष 2016 से 2018 तक हुई वनाग्नि की घटनाओं, प्रभावित वन क्षेत्र एवं राजस्व क्षति के आंकलन का सूक्ष्म चित्र निम्न तालिकाओं के माध्यम से प्रदर्शित किया जा सकता है:

तालिका 1: राज्य में वर्षवार हुई वनाग्नि की घटनाएँ:

वर्ष	कुल घटनाओं की संख्या	कुल प्रभावित क्षेत्र (हेक्ट. में)	क्षति का आंकलन (रूपये में)
2018	2150	4480.04	86,05,375
2017	790	1228.04	21,24,563
2016	2069	4423.35	46,29,825

(स्रोत: उत्तराखण्ड वन विभाग)

तालिका 2: राज्य में वर्षवार एवं जनपदवार सर्वाधिक हुई वनाग्नि की घटनाएँ:

वर्ष	जिला	कुल घटनाओं की संख्या	कुल प्रभावित क्षेत्र (हेक्ट. में)	क्षति का आंकलन (रूपये में)
2018	पौड़ी	692	2315.25	43,85,131
	उत्तरकाशी	257	155.90	3,41,126
2017	अल्मोड़ा	175	400.90	8,24,025
	पौड़ी	128	168.45	3,07,471
2016	पौड़ी	402	1031.75	8,98,975
	नैनीताल	266	494.86	5,45,930

उपरोक्त तालिकाओं से स्पष्ट है कि पिछले तीन वर्षों में हुई वनाग्नि की घटनाएँ सर्वाधिक 2018 में हुईं। 2016 से 2018 तक हुई वनाग्नि की घटनाओं में सर्वाधिक क्रमश: जनपद पौड़ी, अल्मोड़ा एवं पौड़ी में हुई हैं। 2017 में अल्मोड़ा के बाद सर्वाधिक वनाग्नि की घटनाऐं जनपद पौड़ी में ही हुई हैं। अत: स्पष्ट है कि वनाग्नि की दृष्टि से सबसे संवेदनशील

जनपद पौड़ी गढ़वाल रहा है तथा वन क्षेत्रफल की दृष्टि से भी सर्वाधिक वन क्षेत्र वाला जनपद पौड़ी गढ़वाल ही है। 2018 में दूसरी सर्वाधिक वनाग्नि की घटनाएँ जनपद उत्तरकाशी में हुई है जो वन क्षेत्रफल की दृष्टि से भी राज्य में दूसरा स्थान रखता है।

पहले सुनते थे कि अफवाहें जंगल की आग की तरह फैल जाती हैं। लेकिन अब जंगल की आग के लिए अफवाह फैलने की संज्ञा देना गलत ना होगा। अब जंगल की आग अफवाहों की तरह फैल रही हैं। वनाग्नि से युद्ध करने का जिम्मा तो वन विभाग द्वारा अपने स्तर पर लिया गया है साथ ही इस संदर्भ में आम जन की सहभागिता भी परम अपेक्षित है। वनों के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिकरण से बचना परम आवश्यक कारक है, इसे समाज कल्याण की दृष्टि से ही समझना होगा।

वनों से हमें प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से अनेक लाभ होते हैं। अप्रत्यक्ष रूप में वन वायु को शुद्ध करने एवं O_2-CO_2 का संतुलन बनाए रखने, वर्षा होने, मृदा का अपरदन कम करने, बाढ़ की स्थिति पैदा न होने देने, मृदा की उर्वरता बढ़ाने एवं बनाए रखने तथा जीव-जन्तुओं को संरक्षण प्रदान करने आदि में प्रधान एवं महत्वपूर्ण भूमिका में रहते हैं। प्रत्यक्ष रूप में वन प्रदेश की आय हेतु प्रमुख साधन हैं। वनों से औषधियाँ, लकड़ियाँ, मसाले एवं अन्य उपयोगी सामग्रियाँ प्राप्त होने के साथ-साथ ग्रामीण समाज की वनों पर अधिकाधिक निर्भरता भी वनों के महत्व को प्रकाशित करती है।

वनों से होने वाले अनेक लाभों का उपभोग करने के बाद भी वनों के प्रति सौहार्दता प्रकट ना करके मानव समाज अपने पथ से विमुख नहीं हो सकता। केवल सरकारी तंत्र के भरोसे बैठकर वनों को अग्नि कुण्ड में नहीं छोड़ा जा सकता। प्रत्येक नागरिक को वनों के प्रति प्रतिबद्ध होना होगा तभी जाकर कहीं हम वनाग्नि जैसे दानवों से पोषित करने वाले अपने वनों की रक्षा कर सकते हैं।

कलैंडर साठ साल का

कमरे की दीवार पर टंगा है मेरी
कलैंडर साठ साल का
बदल रहा है कलैंडर हर महीने हर साल
पर नहीं बदल रही है मेरी नजर
जो पड़ जाती है स्वत: भोर होते ही
दीवार पर टंगे कलैंडर पर
तब बुनने लगता हूँ दिन भर का ताना बाना।
शाम भीतर प्रवेश करते ही पड़ जाती है नजर
दीवार पर टंगे कलैंडर पर
जो याद दिलाती है सुबह के बुने ताने और बाने की
वो पूरे हुए, नहीं हुए, किन्तु पूरा हो गया है एक दिन।
रात सोते समय फिर पड़ जाती नजर
दीवार पर टंगे कलैंडर पर
जो उलझा देती है मुझे, मेरे ही बुने ताने-बाने में
और ले जाती है किसी अनंत आकाश की ओर
घंटे दो घंटे, नींद आने से पहले।
कलैंडर दिन, हफ्ता, साल, बदल रहा है एक गति से
नहीं बदल रही है मेरी गति, घट रही है
घट रही है, मेरी नजर
लोग कह रहे हैं घट रही है, मेरी उमर भी
कम हो रही है एक-एक दिन।
कलैंडर, बदल रहा है साल दर साल
बदल रहा है भाग्य, भाग्यशालियों का
जो कर रहे है काम वक्त से पहले या वक्त के साथ
उनका कलैंडर बदल रहा है
अस्सी और सौ सालों में
देख रहे है वे कलैंडर को
एक नई दृष्टि से, नई चमक के साथ।
क्या मै भी देख सकूंगा पूरा होते हुए
इस साठ साल के कलैंडर को
एक प्रश्नचिह्न की तरह?
उस चश्मे से, जिसकी एक टांग टूटी है
उसकी जगह बंधा है धागा
देख रहा हूं उस चश्मे को ऊपर नीचे कर
कमजोर नजर से, कांपते हाथों से
दीवार से उतरे हुए कलैंडर को, मात्र सपने की तरह।

शांति प्रसाद 'जिज्ञासु'
हिन्दी अनुभाग, महासर्वेक्षक का कार्यालय, देहरादून

स्वतंत्रता प्राप्ति में असहयोग आन्दोलन की भूमिका

डॉ. राम भरोसे, असिस्टेन्ट प्रोफेसर (हिन्दी) श.बे.चौ. राजकीय महाविद्यालय पोखरी (क्वीली) टिहरी गढ़वाल

प्रत्येक भारतवासी के लिए यह गौरव की बात है कि इस वर्ष हम अपनी आजादी की 71 वीं वर्षगांठ मनाने जा रहे हैं। हमें यह एहसास है कि आजादी हमें बड़ी मुश्किलों से हासिल हुई है। देश की आजादी के लिए न जाने कितने वीरों ने अपनी जान की बाजी लगा दी। कुछेक नामों से हम परिचित हैं और कुछ से अन्जान भी हैं। देश को आजाद कराने में कितने ही आंदोलनों और आंदोलनकारियों की भूमिका रही है। उनमें से ही एक था 'असहयोग आन्दोलन'. जिसकी कमान थी महात्मा गांधी के हाथों में। देश की आजादी और वर्तमान भारत की कल्पना का जिक्र महात्मा गांधी के बगैर अधूरा है। या यूँ कहिए कि शुरू ही नहीं होता। आधुनिक भारत के शिल्पकार गांधी जी मानव जीवन की एकता में विश्वास करते थे जो कि कृत्रिम रूप में पूर्ण है। उसे अलग-अलग करके धार्मिक, नैतिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, व्यक्तिपरक भागों में नहीं बांटा जा सकता। गांधी जी का जीवन कुछ बुनियादी सिद्धांतों पर आधारित था और इसलिये एकीकृत तथा समन्वित था।

गांधी जी द्वारा असहयोग आंदोलन की शुरूआत 1 अगस्त, 1920 को की गयी। इस आन्दोलन की वजह बने 1918 में लागू रोलट एक्ट, 13 अप्रैल 1919 में हुआ जलियांवाला बाग हत्याकांड, और पंजाब में मार्शल लॉ, जिसके अंतर्गत एक खास सड़क से गुजरते हुए लोगों को घुटने के बल रेंगते हुए चलने के लिए कहा जाता था। अंग्रेज अधिकारी जिसको दोषी मानते थे, उन्हें कोड़े लगाना एक आम बात हो गयी थी। इस काम के लिए कुछ स्थानों को निर्धारित कर दिया गया था। साथ ही 1913 से 1918 के मध्य सभी वस्तुओं का दाम दोगुना हो गया था, जिसके चलते देश में भुखमरी और गरीबी चरम पर पहुंच गयी और जिसके कारण महामारी में कई लोगों की जानें गयी। परन्तु इस क्षेत्र में भी ब्रिटिश हुकुमत ने कोई सकारात्मक कार्य नहीं किया। इन सब घटनाओं से गांधी जी समझ गए थे कि ब्रिटिश हुकूमत भारतीयों के प्रति नरमी नहीं बरतेगी बल्कि उनका दमन ही करेगी।

अंग्रेजों की दमनकारी नीतियों के विरोध में 1 अगस्त 1920 को 'असहयोग आन्दोलन' के कार्यक्रम पर विचार करने के लिए कोलकाता में एक विशेष अधिवेशन बुलाया गया। जिसकी अध्यक्षता लाला लाजपत राय ने की। इसी अधिवेशन में महात्मा गांधी ने असहयोग का प्रस्ताव पेश किया था। शुरू में इस प्रस्ताव का विरोध एनी बेसैंट, मदन मोहन मालवीय, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, विपिन चन्द्र पाल, देशबंधु चितरंजन दास, मोहम्मद अली जिन्ना, शंकरन नायर तथा सर नारायण चन्द्रावरकर ने किया, किंतु अली बंधुओं तथा मोतीलाल नेहरू के समर्थन से यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया। यहीं से गांधी युग की शुरूआत भी मानी जाती है।

असहयोग आन्दोलन का संचालन स्वराज की मांग को लेकर किया गया था। इसका उद्देश्य ब्रिटिश सरकार के

साथ सहयोग न करके उनकी कार्यवाहियों और उनके व्यापार में बाधा पहुंचाना था। इसी अधिवेशन में कांग्रेस ने पहली बार भारत में विदेशी शासन के विरूद्ध सीधी कार्यवाही का निर्णय लिया और यह सुनिश्चित किया कि वे विधान परिषदों का बहिष्कार करेंगे और असहयोग व सविनय अवज्ञा आन्दोलन का आगाज करेंगे।

गांधी जी ने अलीबंधुओं के साथ पूरे देश का भ्रमण किया एवं लोगों से असहयोग आन्दोलन में भाग लेने का आहवान किया। अप्रैल में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के विजयवाड़ा अधिवेशन में तिलक कोष में एक करोड़ की राशि एकत्रित करने का निर्णय लिया गया था। इसी अधिवेशन में 20 लाख चरखे लगाये जाने का भी फैसला लिया गया। साथ ही गांधी जी ने भारतीयों से विनती की कि वे अंग्रेजों द्वारा दी गयी सभी उपाधियां एवं सरकारी पदों का त्याग कर दें और उन्होंने कहा कि अपने बच्चों को अंग्रेजी विद्यालय और विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिए न भेजें। उन्होंने भारतीय जनता से अपील की कि वे अंग्रेजी संस्थाओं का त्याग करें और विदेशी वस्तुओं तथा न्यायालयों का बहिष्कार करें।

आन्दोलन शुरू करने से पहले ही गांधी जी ने 'कैसर-ए-हिन्द' पुरस्कार लौटा दिया, अन्य सैकड़ों लोगों ने भी गांधी जी के पदचिह्नों पर चलते हुए अपनी पदवियों एवं उपाधियों को त्याग दिया। 'राय बहादुर' की उपाधि से सम्मानित जमनालाल बजाज ने भी यह उपाधि वापस कर दी। गांधी जी के इन विचारों का बहुत ही गहरा प्रभाव भारतीय जनता पर पड़ा और असहयोग आन्दोलन का अच्छा परिणाम निकला। प्राप्त तथ्यों के अनुसार पहले ही महीने में 90 हजार विद्यार्थियों ने स्कूल-कॉलेज छोड़ दिए। भारी संख्या में विद्यार्थियों ने कलकत्ता, लाहौर में हड़तालें की। इसी समय देश में कई राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई जिनमें मुख्य - काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, गुजरात विद्यापीठ, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, राष्ट्रीय कालेज लाहौर, जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली तथा अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय।

संस्थाओं के बहिष्कार में बंगाल के बाद पंजाब का स्थान था। बंगाल में चितरंजनदास और पंजाब में लाला लाजपत राय इस आन्दोलन का नेतृत्व कर रहे थे। वकालत छोड़ने वाले चोटी के वकीलों में सी.आर. दास, टी प्रकाशन, एम. आर. जयकर, मोतीलाल नेहरू, किचलू, राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, जवाहरलाल नेहरू, आसफ अली, विठ्ठलभाई पटेल आदि शामिल थे।

असहयोग आन्दोलन का सबसे महत्वपूर्ण अस्त्र साबित हुआ 'विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार'। देश के हर क्षेत्र में इसका व्यापक असर हुआ। विदेशी वस्त्रों की होली जलाई गयी, महिलाओं ने विदेशों में बनी साड़ियों एवं दुपट्टों को आग के हवाले कर दिया। लोग विदेश में बने कपड़ों का त्याग कर खादी और स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग दैनिक जीवन में करने लगे। कांग्रेस और खिलाफत स्वयंसेवकों ने विदेशी कपड़ों की दूकानों पर पिकेटिंग की और हड़तालें संगठित कीं। इतिहासकार ए.आर. देसाई ने अपनी पुस्तक 'भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि में जिक्र किया है **''उनकी संख्या गैर कानूनी करार दी गयी फिर भी वे अपना काम करते रहे और बड़ी तादाद में गिरफ्तार होते रहे। सरकार ने आन्दोलन के सभी प्रमुख नेताओं को साल के खत्म होने से पहले गिरफ्तार कर उन्हें जेल भेज दिया''**। इस आन्दोलन के चलते लगभग 30 हजार लोग गिरफ्तार हुए। विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का परिणाम यह हुआ कि 1920-21 में जहां एक अरब दो करोड़ रूपये के विदेशी कपड़ों का आयात हुआ था, वहीं 1921-22 में यह घटकर 57 करोड़ पर ठहर गया। विदेशी कपड़ों के बहिष्कार के परिणामस्वरूप स्थानीय कपड़ा उद्योग को प्रोत्साहन मिला।

विदेशी कपड़ों की होली जलाने का दूसरा रचनात्मक पक्ष था 'चरखों' का संचालन। कांग्रेस अधिवेशन में 20 लाख चरखे लगाये जाने का भी फैसला लिया गया था। धीरे-धीरे कई घरों में महिलाएं चरखा चलाने लगीं। इन सबसे ब्रिटिश आर्थिक व्यवस्था पर गहरा घाव लगा। असहयोग आन्दोलन से भारतीय जनता में स्वराज के प्रति नयी चेतना का संचार हुआ।

जैसा कि ऊपर हमने कहा असहयोग आन्दोलन में गांधी जी ने सरकारी पदों, विदेशी वस्तुओं-वस्त्रों एवं उपाधियों का बहिष्कार करने के लिए आह्वान किया, साथ ही इसके लिए भारत में लोक अदालतों की स्थापना पर भी जोर दिया।

वार्ता के अंत में असहयोग आन्दोलन के परिणाम की चर्चा करते हैं, जिसको कुछ बिन्दुओं में समझाने का प्रयास किया है-

1. असहयोग आन्दोलन से प्रभावित होकर लगभग 2 तिहाई मतदाताओं ने विधानमंडल के चुनाव का बहिष्कार किया और इन मतदाताओं ने अपने मत का प्रयोग नहीं किया।
2. अध्यापकों और विद्यार्थियों ने स्कूल जाना छोड़ दिया।
3. कई भारतीयों ने जो सरकारी सेवा में थे, अपने-अपने पदों से इस्तीफा दे दिया और असहयोग आन्दोलन का हिस्सा बन गए।
4. भारतीय जनता में ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ बहुत क्रोध था और उन्होंने विदेशी कपड़ों की जगह-जगह होली जलायी।
5. जिस समय असहयोग आन्दोलन हो रहा था, उस समय ब्रिटेन के राजकुमार 'प्रिन्स ऑफ वेल्स' का 17 नवम्बर 1921 को भारत आगमन हुआ और उनका स्वागत नारों एवं प्रदर्शनों से किया गया।
6. असहयोग आन्दोलन स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्ष का महत्वपूर्ण अंग बन गया और भविष्य में इस आन्दोलन ने भारत की स्वतंत्रता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

असहयोग आन्दोलन बहुत प्रभावशाली तरीके से भारत के जनमानस तक पहुंच रहा था और बहुसंख्यक रूप से लोग इससे जुड़ रहे थे। यह आन्दोलन लगभग 2 वर्षो तक बहुत ही सफलतापूर्वक चलता रहा और 1857 के स्वतंत्रता संग्राम की क्रांति के बाद पहली बार असहयोग आन्दोलन से अंग्रेजी राज की नींव हिल गयी। ब्रिटिश तंत्र द्वारा इस आन्दोलन को कुचलने के लिए कई प्रयास किए गए, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली, बल्कि यह प्रतिदिन बढ़ता रहा। जब ब्रिटिश हर प्रकार से आन्दोलन को रोकने में विफल रहे, तब उन्होंने कांग्रेस के कुछ सक्रिय नेताओं के साथ-साथ गांधी जी को भी गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया। चूंकि गांधी जी उस समय भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के सर्वाधिक प्रमुख व्यक्ति थे यह देखकर जनता ने विरोध शुरू कर दिया। यह विरोध हिंसात्मक होने लगा। जिसके फलस्वरूप 5 फरवरी 1922 को जनता ने गोरखपुर जिले के चौरा-चौरी नामक स्थान पर एक पुलिस चौकी में आग लगा दी जिसमें 22 पुलिस वालों की जान गयी। इस हिंसक घटना से गांधी जी बहुत आहत हुए और असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया। 12 फरवरी 1922 को बारदोली में हुई कांग्रेस की बैठक में इस आन्दोलन पर अपने फैसले के विषय में गांधी जी ने 'यंग इण्डिया' में लिखा था, 'आन्दोलन को हिंसक होने से बचाने के लिए मैं हर एक अपमान, हर एक यातनापूर्ण बहिष्कार, यहां तक कि मौत भी सहने को तैयार हूँ', गांधी जी द्वारा असहयोग आन्दोलन के स्थगन पर मोतीलाल नेहरू ने कहा कि, ''यदि कन्याकुमारी के एक गांव ने अहिंसा का पालन नहीं किया, तो इसकी सजा हिमालय के एक गांव को क्यों मिलनी चाहिए''। अपनी प्रतिक्रिया में सुभाषचन्द्र बोस

ने कहा, "ठीक इस समय, जबकि जनता का उत्साह चरमोत्कर्ष पर था, वापस लौटने का आदेश देना राष्ट्रीय दुर्भाग्य से कम नहीं"। आन्दोलन के स्थगित करने का प्रभाव गांधी जी की लोकप्रियता पर पड़ा। 13 मार्च 1922 को गांधी जी को गिरफ्तार किया गया था। न्यायाधीश ब्रूम फील्ड ने गांधी जी को असंतोष भड़काने के अपराध में 6 वर्ष की कैद की सजा सुनाई। स्वास्थ्य सम्बन्धी कारणों से उन्हें 5 फरवरी 1924 को रिहा कर दिया गया। इन आलोचनापरक वाक्यों से यह तो स्पष्ट हो ही चुका है कि असहयोग आन्दोलन देश को आजाद कराने में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था। इस वर्ष इस आन्दोलन के 98 वर्ष पूर्ण होने जा रहे हैं। निश्चय ही असहयोग आन्दोलन भारतीय स्वतंत्रता आंदोलनों की संघर्षमय यात्रा में मील का पत्थर साबित हुआ।

चाय के बहाने

चाय एक एहसास है
हमारे प्यार का ...
पानी
जैसे ख्याल कोई आँखों से झरता हुआ
पत्ती
कि दूर से एक ताजगी
जो तुम आओ
तो जैसे संग आये
चीनी
मिठास उमड़ते नेह की है
वरना बाजार में मीठापन कहाँ
और प्याला
कि जिसमें चाय के बहाने
कोई सारा प्यार उड़ेलता है अपना
बहुत सलीके से
सौंपा
कि ज्यों जिन्दगी अपनी
कभी बैठें
यूँ चुस्कियां लेते हुए
बात साथ की है
चाय एक खूबसूरत बहाना है ...
चाय एक एहसास है
हमारे प्यार का !!

हिमानी हवाएँ

ना सही हमेशा
पर सूर्य तलाशता है मनुज
अधिकतर
सूर्य से पीठ कर ...
रात का पथिक
एक यात्रा में जी गया
जाने कितने जीवन
कितनी यादें यूँ आयीं
और यूँ गयीं
ऊपरी गगन देख लेते हैं सभी
आत्मा का आँगन भी निहारा होता
प्यार के असीम पुष्प
सदा हैं वहाँ
बस सच का छिड़काव किया होता
हम घाट घाट आचमन के भक्त नहीं
आज भी
सौ- सौ सूर्य
सोच के सागर से काढ़
हथेली पर धरे हैं
तब किसी का प्यार
तपिश को जो ढाल दे
हिमानी हवाओं में
देता है अपनी अप्रतिम अनुभूति आज !!

डॉ. सम्राट सुधा
शिक्षाविद् एवं साहित्यकार,
गणेशपुर, रुड़की

वनरक्षक

दुनिया से दूर
एक नयी दुनिया में हूं
घर से दूर हूं
मगर अपने घर में हूं
यूं तो कहने को मैं अकेला हूं
पर तन्हा तो नहीं हूं ..
ये धरती मेरी मां है
तो सर पे आसमां का साया है
इन वादियों में एक जीवन है
मैं जीवन का आधार समझने आया हूं
सुनता हूं तराने पंछियों के
जानवरों के निशान ढूंढता हूं
नदी की कल-कल से बहल जाता हूं
पेड़ों के झुरमुट में चैन पाता हूं
सूरज सी ऊंची किरणों में नहाता हूं
सांझ की खामोशी मे खो जाता हूं
सर्दी हो, धूप हो या बरसात हो
मैं फर्ज अपना शान से निभाता हूं
हूजूर की जी-हुजूरी बजाता हूं
तो गांववालों से मेल भी बढ़ाता हूं
सीने में एक आग लिए घूमता हूं
पर जंगल की आग बुझाता हूं
हां मैं एक वनरक्षक हूं
"वनरक्षक"
वनों की हिफाजत में,
मैं जी जान लुटाता हूं ...
मैं जी जान लुटाता हूं ...

सभी वनरक्षकों को समर्पित

अभिषेक जोगावत
भा.व.से. परिवीक्षार्थी (2017-19)
इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी

ओजोन परत : सीमान्तक छत

ओजोन परत, ओजोन परत !
ओजोन परत, ओजोन परत!
स्ट्रेटोस्फीयर का हिस्सा
दस से उन्नीस मील ऊपर,
जग के जड़-जीवों के सर पर
सीमान्तक यह प्राकृतिक छत!

ओजोन परत, ओजोन परत!

इसको जो छेदेंगे हमसब
वायुमंडल को दूषित कर
सूरज की किरणें कुछ विशेष
घुस आएंगी तब धरती पर
ये किरणें हमें सताएंगी
पूरी दुनिया होगी आहत !

ओजोन परत, ओजोन परत!

वायुमंडल के दूषण से
न चूने लगे हमारी छत-
हम सबकी यह जिम्मेवारी
रहना है चौकस दोस्त सतत !
पर्यावरण प्रदूषण-मुक्त रहे
ताकि हँसता रह सके जगत!
ओजोन परत, ओजोन परत!

सी.एफ.सी. है दुश्मन कराल,
ओजोन-अणु तोड़े सत्वर,
हम इसे ही न बनने पर दें
तो खतरा कम हो धरती पर।
उपयोग करें कम ए.सी. और -
रेफ्रीजेरेटर से हों विरत।

ओजोन परत, ओजोन परत!

जीवन-शैली हो सरल, करें -
प्राकृतिक चीजों का उपयोग।
फैशन की दुनिया की चीजें
देतीं तरह-तरह के रोग।
अपनायें क्यों तब वस्तु वही -
जो करे हमारी ही दुर्गत ?

ओजोन परत, ओजोन परत!
ओजोन परत, ओजोन परत!

कुमार मनीष अरविन्द
भा.व.से., रांची,
मो. 09199218501

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी में राजभाषा नीति का अनुपालन : एक रिपोर्ट

चमन सिंह, आशुलिपिक, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून

भारत सरकार की राजभाषा नीति के सफल कार्यान्वयन तथा राजभाषा अधिनियम एवं नियमों के अनुपालन तथा सरकारी कामकाज में हिंदी के प्रयोग की दिशा में यह अकादमी सदैव प्रयासरत है। वर्ष के दौरान अकादमी में हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु विभिन्न प्रयास किये गये जिससे अकादमी में हिंदी कामकाज में अधिकाधिक बढ़ोतरी हुई है। अकादमी में राजभाषा अनुभाग स्थापित है जिसे निम्नलिखित कार्य सौंपे गये हैं-

राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन एवं पत्राचार

अकादमी में राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए सभी अनुभागों को हिंदी कार्य के लिए निर्देशित किया गया है। हिंदी में प्राप्त जिन पत्रों के उत्तर दिये जाने अपेक्षित हैं उनके उत्तर हिंदी में ही दिये जा रहे हैं। अकादमी से बाहर जाने वाले पत्रों के लिए अकादमी के प्रेषण लिपिक को लिखित आदेश दिया गया है कि वह अंग्रेजी में भेजे जाने वाले पत्रों को तब तक प्रेषित न करें जब तक उनका हिंदी अनुवाद उपलब्ध न हो। कार्यालय में प्रयोग की जाने वाली फाइलों में अधिकांश टिप्पणियां हिंदी में लिखी जा रही हैं। कार्यालय में प्रयोग होने वाले रजिस्टरों, प्रपत्रों आदि में प्रविष्टियां हिंदी में ही की जा रही हैं तथा धारा 3(3) के अन्तर्गत आने वाले दस्तावेजों को अनिवार्य रूप से द्विभाषी जारी किया जा रहा है। अकादमी में हिंदी को बढ़ावा देने हेतु जांच बिन्दुओं का गठन भी किया गया है जिनकी समीक्षा प्रत्येक तिमाही बैठक के दौरान की जाती है।

विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों का आयोजन

अकादमी में निदेशक महोदय की अध्यक्षता में एक विभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति कार्यरत है जिसकी बैठकें प्रत्येक तिमाही में नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं। बैठक में अकादमी की राजभाषा प्रगति से संबंधित तिमाही रिपोर्ट की समीक्षा की जाती है तथा राजभाषा को बढ़ावा देने हेतु अधिकारियों के साथ नये-नये विषयों/बिन्दुओं पर चर्चा की जाती है ताकि अकादमी में हिंदी का प्रचार-प्रसार अधिकाधिक हो सके।

हिन्दी प्रशिक्षण

अकादमी में भारतीय वन सेवा परिवीक्षार्थियों को अन्य प्रशिक्षणों के साथ-साथ 'राष्ट्रभाषा' एवं 'क्षेत्रीय भाषा' के रूप में राजभाषा हिन्दी का प्रशिक्षण दिया जाता है। अकादमी में हिन्दी को बढ़ावा देने के लिए अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों एवं कर्मचारियों को समय-समय पर आयोजित होने वाली हिंदी कार्यशालाओं एवं राजभाषा से संबंधित अन्य क्रियाकलापों के माध्यम से भी प्रशिक्षित किया जाता है। प्रशिक्षण को सुविधाजनक बनाने के लिए अकादमी में एक 'लैंग्वेज लैब' है जिसमें कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर के माध्यम से अन्य भारतीय भाषाओं के साथ-साथ हिंदी सीखने की सुविधा भी उपलब्ध करायी गयी है। अकादमी के लगभग सभी कम्प्यूटरों पर यूनीकोड सुविधा भी दी गई है ताकि हिंदी सीखने वाले अधिकारियों/परिवीक्षार्थियों एवं कर्मचारियों को हिंदी फॉण्ट में कोई असुविधा न हो।

अनुवाद कार्य

अकादमी में हिंदी में कार्य को सुविधाजनक बनाने हेतु विभिन्न सामान्य अनुवाद कार्यों के साथ-साथ वे सभी कागजात जो कि अनिवार्यत: द्विभाषी जारी होने आवश्यक हैं, का अनुवाद कार्य भी राजभाषा अनुभाग द्वारा किया जाता है ताकि अकादमी में हिंदी के प्रयोग में कोई कठिनाई न हो।

हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन

अकादमी में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों की सरकारी कामकाज में हिंदी भाषा के प्रति रूचि बढ़ाने तथा उनके समक्ष आने वाली समस्याओं के निराकरण के लिए प्रत्येक तिमाही में हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन राजभाषा अनुभाग द्वारा किया जाता है। पिछली तिमाहियों के दौरान भी कई कार्याशालाएं आयोजित की गईं जिसमें अकादमी के अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया तथा हिन्दी के उपयोग में आनी वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं के निराकरण हेतु कार्यशाला के माध्यम से उपयुक्त सुझावों व सूचनाओं का आदान-प्रदान किया गया।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में हिन्दी निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन

अकादमी द्वारा 10 अक्टूबर, 2017 को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में हिंदी निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें देहरादून स्थित केन्द्र सरकार के कार्यालयों/संगठनों में कार्यरत कार्मिकों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। प्रतियोगिता के विजेताओं को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में पुरस्कृत किया गया।

हिन्दी दिवस/पखवाड़े का आयोजन

वर्ष 2018 में अकादमी में 31.08.2018 से 14.09.2018 तक 'हिन्दी पखवाड़ा' मनाया गया। इस दौरान अधिकारियों, परिवीक्षार्थियों तथा कर्मचारियों के लिए विभिन्न हिंदी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया तथा समापन समारोह के अवसर पर विजेताओं को पुरस्कृत किया गया जिनकी सूची आगे दी गई है।

हिन्दी प्रोत्साहन योजना

अकादमी में हिंदी प्रोत्साहन योजना को लागू रखा गया, जिसके अन्तर्गत वर्ष के दौरान हिंदी में सर्वश्रेष्ठ कार्य करने वाले कर्मियों को पुरस्कृत किया गया जिनका विवरण आगे दिया गया है।

राजभाषा पुरस्कार

वर्ष 2016-17 के दौरान संघ की राजभाषा नीति के श्रेष्ठ निष्पादन के लिए अकादमी ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इस हेतु 09 फरवरी, 2018 को वाराणसी में आयोजित उत्तर क्षेत्रीय राजभाषा सम्मेलन के दौरान अकादमी को शील्ड एवं प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया।

'राजभाषा पखवाड़ा-2018' के दौरान हिंदी प्रतियोगिताओं के विजेताओं की सूची

क्र.सं.	प्रतियोगिता का नाम	परिणाम/विजेता	पुरस्कार
		कर्मचारी वर्ग	
1.	'चित्र देखो-कहानी लिखो प्रतियोगिता'	श्री प्रमोद कुमार सिंह, आशुलिपिक	प्रथम
		श्री महेन्द्र सिंह बिष्ट, एम.टी.एस.	द्वितीय
		श्री शशिकांत, प्रवर श्रेणी लिपिक	तृतीय
		मो. एहसान, एम.टी.एस.	सांत्वना
2.	हिन्दी टिप्पण एवं आलेखन प्रतियोगिता	श्री शशिकांत, प्रवर श्रेणी लिपिक	प्रथम
		श्री प्रमोद कुमार सिंह, आशुलिपिक	द्वितीय
		श्री ललित मलिक, प्रवर श्रेणी लिपिक	तृतीय
		श्री महेन्द्र सिंह बिष्ट, एम.टी.एस.	सांत्वना
3.	हिन्दी आशुलिपि प्रतियोगिता	श्री नरेन्द्र कुमार, आशुलिपिक	प्रथम
		श्रीमती अरविन्दर कौर, आशुलिपिक	द्वितीय
		श्रीमती सीमा शर्मा, आशुलिपिक	तृतीय
4.	हिन्दी टंकण प्रतियोगिता	श्री सुमित राणा, अ.श्रे.लिपिक	प्रथम
		श्री दर्शन सिंह नेगी, एम.टी.एस.	द्वितीय
		श्री महेन्द्र सिंह बिष्ट, एम.टी.एस.	तृतीय
		श्रीमती सीमा शर्मा, आशुलिपिक	सांत्वना
5.	हिन्दी निबन्ध लेखन प्रतियोगिता-I	श्री महेन्द्र सिंह बिष्ट, एम.टी.एस.	प्रथम
		श्री प्रमोद कुमार सिंह, आशुलिपिक	द्वितीय
		श्री नरेन्द्र कुमार, आशुलिपिक	तृतीय
		श्री शशिकान्त, प्रवर श्रेणी लिपिक	सांत्वना
6.	हिन्दी निबन्ध लेखन प्रतियोगिता-II केवल पूर्व श्रेणी-घ (लिपिक वर्ग का कार्य करने वाले कर्मियों को छोड़कर) कर्मचारियों के लिए	श्री सुरेन्द्र कुमार, एम.टी.एस.	प्रथम
		श्री नरेन्द्र सिंह, एम.टी.एस.	द्वितीय
		श्री रामनाथ, एम.टी.एस.	तृतीय
		श्री केम प्रसाद, एम.टी.एस.	सांत्वना
		परिवीक्षार्थी वर्ग	
1.	'चित्र देखो-कहानी लिखो प्रतियोगिता'	सुश्री रूचि सिंह	प्रथम
		श्री अभिषेक जोगावत	द्वितीय
		सुश्री अदिति भारद्वाज	द्वितीय
		श्री सौरभ सिंह ठाकुर	तृतीय
2.	हिन्दी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता	**टीम 'ग'** (श्री सौरभ सिंह ठाकुर/श्री कुन्दन कुमार/श्री संजीव रंजन)	प्रथम
		टीम 'क' (श्री अंकित कुमार सिंह/श्री सांवर मल स्वामी/ श्री अवनीश कुमार चौधरी	द्वितीय

क्र.सं.	प्रतियोगिता का नाम	परिणाम/विजेता	पुरस्कार
		टीम 'च' (सुश्री रुचि सिंह/श्री धैर्यशील पाटिल/ श्री रौशन कुमार)	तृतीय
		टीम 'घ' (श्री सौमित्र शुक्ला/श्री अश्विनी कुमार/ श्री सागर पवार)	सांत्वना
3.	हिन्दी टिप्पण एवं आलेखन प्रतियोगिता	श्री पंकज सूर्यवंशी	प्रथम
		श्री सांवर मल स्वामी	द्वितीय
		श्री पाटील दीपक प्रभाकर	तृतीय
		श्री अंकित कुमार सिंह	सांत्वना

हिन्दी प्रोत्साहन योजना 2017-18 के लिए पुरस्कृत कार्मिकों की सूची

क्र.सं.	कार्मिक का नाम	पुरस्कार
1.	श्री ललित मलिक, प्रवर श्रेणी लिपिक	प्रथम पुरस्कार
2.	श्री सुमित राणा, अवर श्रेणी लिपिक	
3.	श्री शशिकान्त, प्रवर श्रेणी लिपिक	द्वितीय पुरस्कार
4.	श्री प्रमोद कुमार सिंह, आशुलिपिक	
5.	श्री अनिल कुमार गौड़, प्रयोगशाला परिचर	
6.	श्री पदम सिंह बिष्ट, एम.टी.एस.	तृतीय पुरस्कार
7.	श्री सतनाम सिंह, सहायक केयरटेकर	

1 जनवरी, 2019 को अकादमी के संकाय सदस्यों की सूची

क्र.सं.	संकाय सदस्या	पदनाम	संवर्ग	नियतन वर्ष
1.	श्री ओमकार सिंह	निदेशक	एजीएमयूटी	1982
2.	श्री एस.के. अवस्थी	अपर निदेशक	उत्तर प्रदेश	1991
3.	श्री गंगा सिंह	प्राध्यापक	केरल	1988
4.	डॉ. प्रवीन झा	प्राध्यापक	झारखण्ड	1992
5.	डॉ. एस. सेंथिल कुमार	अपर प्राध्यापक	एजीएमयूटी	1998
6.	श्री उत्तम कुमार शर्मा	अपर प्राध्यापक	मध्य प्रदेश	1999
7.	श्रीमती निधि श्रीवास्तवा	अपर प्राध्यापक	पंजाब	2001
8.	डॉ. बी. बालाजी	अपर प्राध्यापक	जम्मू एवं काश्मीर	2003
9.	डॉ. पी. विश्वकन्नन	अपर प्राध्यापक	एजीएमयूटी	2003
10.	डॉ. के. ससिकुमार	अपर प्राध्यापक	त्रिपुरा	2003
11.	डॉ. एस.पी. आनंद कुमार	सह प्राध्यापक	पंजाब	2003

'अरण्य' अंक 16 पर प्राप्त प्रतिक्रियाएं

ऑप्टो इलेक्ट्रोनिक्स फैक्टरी
आयुध निर्माणी बोर्ड की इकाई
भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय
रायपुर, देहरादून-248 008 (उत्तराखण्ड)
Opto Electronics Factory
A Unit of Ordnance Factory Board
Government of India, Ministry of Defence
दूरभाष/Tele : 0135-2787101-03 फैक्स/Fax: 0135-2787181 ई मेल/Email: oif.ofb@nic.in

आपके द्वारा भेजी गई वार्षिक राजभाषा पत्रिका "अरण्य" के 16 वें अंक की प्रति इस कार्यालय को प्राप्त हुई, जिसके लिए आपका अन्यवाद तथा इसकी पावती आपके सूचनार्थ प्रेषित है।

पत्रिका के माध्यम से राजभाषा कार्यान्वयन को बढ़ाने का आपका प्रयास अत्यंत सराहनीय है, एवं इसके माध्यम से हमें अपके संस्थान की विभिन्न गतिधियों से रूबरू होने का अवसर प्राप्त हुआ। पत्रिका में सम्मिलित विभिन्न विषयक लेख व समस्त रचनाएं अत्यंत उत्कृष्ट है, तथा जानकारी से ओतप्रोत हैं। आपको पत्रिका के सफल प्रकाशन हेतु बधाई तथा भविष्य के लिए शुभकामनाएं।

दिनांक: 24.12.2018

(कमलेश कुमार)
संयुक्त महाप्रबंधक/प्रशासन
कृते महाप्रबंधक

क्षेत्रीय कार्यालय /
कर्मचारी राज्य बीमा निगम
EMPLOYEES STATE INSURANCE CORPORATION
(श्रम एवं रोजगार मंत्रालय, भारत सरकार)
MINISTRY OF LABOUR & EMPLOYMENT, GOVT. OF INDIA
पंचदीप भवन, विंग नं. 4, शिवपुरी, प्रेमनगर, देहरादून, उत्तराखण्ड
PANCHDEEP BHAWAN, WING NO. 4, SHIVPURI
PREMNAGAR, DEHRADUN, UTTARAKHAND
Code : PIN Code : 248007

दूरभाष
EEPBAX NO.
0135-2774782

फैक्स
0135-2771542

आपके पत्र संख्या: 2220/2017/ रा.व. अकदामी/02 हिंदी अरण्य)ए दिनांक: 23.02.2018 के साथ इंदिया गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून द्वारा प्रकाशित हिंदी गृह पत्रिका **"अरण्य"** के अंक-16, वर्ष 2017 की प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका भेजने के लिए हार्दिक धन्यवाद।

पत्रिका की साज सज्जा आकर्षक तथा मुद्रण कार्य उच्च-कोटि का है। पत्रिका का मुद्रण एवं प्रस्तुति अत्यंत सराहनीय है। पत्रिका में प्रकाशित विविध विषयक लेख, रचनाएं रोचक होने के साथ-साथ ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी है।

कुल मिलाकर पत्रिका ज्ञानवर्धक एवं कार्यालयीन कार्यों के लिए उपयोगी बनी है। पत्रिका प्रकाशन कार्य से जुड़े सभी अधिकारियों तथा कर्मचारियों को उनके उत्कृष्ट योगदान के लिए हार्दिक बधाईयां।

सादर,

आपका सत्यनिष्ठ,

दिनांक: 05.3.2018

(विजय बोकोलिया)

दूरभाष/Phones: 0135-2787004 से 2787007
फैक्स/Fax: 0135-2787161 व 2787128

सभी पत्रादि निदेशक को ही सम्बोधित होने चाहिए, किसी वैज्ञानिक/अधिकारी के नाम से नहीं
All correspondnace should be addressed to Director and not to any Scientist/Officer by name.

भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय
रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन
यंत्र अनुसंधान तथा विकास संस्थान
रायपुर रोड, देहरादून-248 007
GOVT. OF INDIA, MINISTRY OF DEFENCE
DEFENCE R&D ORGANISATION
INSTRUMENTS R&D ESTABLISHMENT
RAIPUR ROAD, DEHRADUN-248008

सन्दर्भित पत्र के साथ इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी, देहरादून द्वारा प्रकाशित वार्षिक हिन्दी पत्रिका 'अरण्य' अंक-16, वर्ष-2017 की एक प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका प्रेषण हेतु धन्यवाद। पत्रिका का आवरण आकर्षक है। पत्रिका में प्रकाशित सभी लेख एवं रचनाएं रोचक तथा ज्ञानवर्द्धक हैं।

पत्रिका के स्तरीय प्रकाशन में सम्पादक मण्डल का अमूल्य योगदान परिलक्षित हो रहा है। आगामी अंकों के सफल प्रकाशन हेतु इस संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की ओर से शुभकामनाएं।

दिनांक: 21-3-2018

(रंजना खत्री)
प्रशासनिक अधिकारी
नामित राजभाषा अधिकारी एवं सदस्य सचिव, रा.का.स.
कृते निदेशक

भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय
रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन
रक्षा इलैक्ट्रोनिकी प्रयोज्यता प्रयोगशाला
रायपुर रोड, देहरादून-248 007
दूरभाष : 2787083, 2787122
फैक्स: 0135-2787265, 2787290

Govt. of India, Ministry of Defence
Defence Researnch & Development Laboratory
Defence Electronics Application Laboratory
Raipur Road, Dehradun-248001
Telephone : 2787083, 2787122
Fax: 0135-2787265, 2787290

आपके द्वारा संदर्भित पत्र के माध्यम से प्रेषित, विषयांकित गृह पत्रिका की प्रति इस कार्यालय को प्राप्त हुई है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों के माध्यम से महत्वपूर्ण जानकारी दी गई है, जोकि निश्चित रूप से सभी के लिए रोचक एवं ज्ञानवर्धक सिद्ध होगी। इसके लिए, पत्रिका के लेखक एवं पत्रिका के संपादन से जुड़े सभी कार्मिक बधाई के पात्र हैं।

आगामी अंक के और अधिक बेहतर प्रकाशन हेतु हार्दिक शुभकामनाएं।

भवदीय,

दिनांक: 03.5.2018

(अजय मलिक)
वैज्ञानिक 'जी' एवं अध्यक्ष,
राजभाषा समन्वयन समिति

अरण्य अंक-16, वर्ष 2017 का अंक हस्तगत हुआ। अंक का महत्वपूर्ण लेख, सम्पत सिंह बिष्ट जी का लेख 'प्रेमचंद की विरासत एवं भारत में किसानों और वन्य जंतुओं के बीच संघर्ष : एक समीक्षा' है। प्रेमचन्द की कहानी 'पूस की रात' को इस प्रकार से वन्य जंतुओं और वन के संरक्षण के संदर्भ में आधार बनाया जा सकता है, सोचा न था! श्री बिष्ट ने विभिन्न राज्यों के परिप्रेक्ष्य में बहुत सहज और परिवेश को सम्मिलित करते हुए वन्य संरक्षण की चर्चा की है, जो अत्यंत स्वाभाविक व व्यावहारिक है। लेख का अंत भी उपर्युक्त कथा के अंतिमांश से होता है। लेखक सम्पत सिंह बिष्ट का यह अंतिम कथन मन को छू गया। केन्द्रीय सरकार और राज्यों के वन विभाग शायद वन्य जन्तुओं को जंगल से निकलने से नहीं रोक सकते, लेकिन 'कम्बल' देकर किसानों की मदद तो कर सकते हैं। यहां 'कम्बल' का सांकेतिक अर्थ है 'संसाधन' एवं सशक्तिकरण। किसानों और वन्य जंतुओं के संघर्ष के शमन के लिए रणनीति बनाते समय इस बिन्दु को केंद्र में रखना आवश्यक है।

वन तथा प्रकृति सम्बद्ध संगीता शाह 'शकुन' के दोहे, 'इतना-सा संदेश' शीर्षकान्तर्गत बहुत अर्थमय है। दुर्लभ सफेद पलाश शीर्षक से योगेश पारधी तथा लेख 'फफूंद (फंजाई) : वन परिस्थितिकी का एक अभिन्न अंग ज्ञानवर्द्धक है। आजाद सिंह का लेख- 'जार्ज एवरेस्ट : मसूरी की एक उपेक्षित ऐतिहासिक धरोहर' एक उपेक्षित धरोहर की ओर समुचित ध्यान आकृष्ट करने के साथ उत्तरदायी संस्थाओं की कमी को भी दर्शाता है।

पत्रिका को भाषा और साहित्य से भी जोड़ना, इसे विस्तार देता है। कलेवर ओर सज्जा की सौम्यता भी आकर्षक है। रचनाओं की पृष्ठभूमि में छायाचित्रों ने सौंदर्य दिया है। वर्तनी की शुद्धि भी एक उपलब्धि और स्तर है इस अंक का! सम्पादन मण्डल का परिश्रम सुन्दर साकार हुआ! आगामी अंकों हेतु शुभकामनाएं!

डॉ. सम्राट सुधा, शिक्षाविद् एवं साहित्यकार, रुड़की

चित्र सौजन्य : श्रीमती निधि श्रीवास्तवा
अपर प्राध्यापक
इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी

अरण्यं ते पृथिवी स्योनमस्तु

इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय वन अकादमी

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, भारत सरकार
पो.ऑ. न्यू फॉरिस्ट, देहरादून - 248 006 (उत्तराखण्ड)
दूरभाष: 0135-2225999, फैक्स: 2757314
वेबसाइट: www.ignfa.gov.in